प्रकृति भी मुखर हो उठी



मुनिज्ञान



प्रथम संस्करण १९८७
११०० प्रतिया



मूल्य : ७ रुपये मात्र



रकाशक :
ी अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
रता भवन, बीकानेर (राज.)

:
जैन आर्ट प्रेस
समता भवन, बीकानेर (राज.)

"प्रकाशकीय"

साधुमार्ग की इस पवित्र पावन धारा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये बड़े-बडे आचार्यो ने अपना-अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। भगवान् महावीर के बाद अनेक बार आगमिक धरातल पर क्राति का प्रसग आया है। जिसका उद्देश्य श्रमण संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने का रहा। ऐसी क्रान्ति धारा मे क्रियोद्धारक, महान् आचार्य श्री हुक्मीचदजी म. सा. का नाम विशेष रूप से उभर कर सामने आता है। तत्कालीन युग मे जहा शिथिलाचार व्यापक तौर पर फैलता जा रहा था। शुद्ध साधुत्व की स्थिति विरल ही परिलक्षित होती थी, बड़े-२ साधु भी मठो की तरह उपाश्रयो मे अपना स्थान जमाये हुए थे। चेलो के पीछे साधुता बिखरती जा रही थी। ऐसे युग मे आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा. ने उपदेशो से ही नही अपितु अपने विशुद्ध एवं उत्कृष्ट सयममय जीवन से जन मानस को प्रभावित किया। आचार्य प्रवर केवल तपस्वी अथवा सयमी ही नही थे वरन् श्रमण सस्कृति के गहरे आगमिक अध्येता श्रुतधर थे। आपके जीवन का ही प्रभाव था कि हजारो स्त्री पुरुष आपके चरण सान्निध्य को पाने के लिए लालायित रहते थे। 'तिन्नाण तारयाणं' के आदर्श आचार्य प्रवर ने योग्य मुमुक्षुओ को दीक्षित किया और जो देशव्रती बनना चाहते थे, उन्हे देशव्रती बनाया। इस प्रकार सहज रूप से ही चतुर्विध संघ का प्रवर्तन हो गया।

समुद्र मे जिस प्रकार दूर तक गंगा का पाट दिखलाई देता है वैसे ही जैन धर्म के समुद्र मे आचार्य प्रवर की यह धारा एकदम अलग-थलग सी परिलक्षित होने लगी। यहा से

फिर साधुमार्ग मे एक क्रान्ति घटित हुई । जिस क्रान्ति की धारा पश्चात्वर्ती आचार्यो से निरन्तर आगे बढ़ी । आज हमे परम प्रसन्नता है कि समता विभूति, विद्वद् शिरोमणि, जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य की हमे प्राप्ति हुई है । श्रद्धेय आचार्य प्रवर का व्यक्तित्व एव कर्तृत्व अनूठा एव महनीय है । आपने एक साथ पच्चीस-पच्चीस दीक्षाए देकर सैकडो वर्षो के अतीत के इतिहास को प्रत्यक्ष कर दिखाया है । ऐसी एक नही अनेक क्रान्तिया आचार्य प्रवर के सान्निध्य मे घटित हो रही है । विशुद्ध सयम पालन के साथ आपके सान्निध्य मे आपके शिष्य-शिष्या रूप साधु-साध्वी वर्ग ने सम्यक् ज्ञान विज्ञान की दिशा मे भी आश्चर्य जनक विकास किया है ।

शान्त क्रान्ति के अग्रदूत स्वर्गीय आचार्य श्री गणेशी-लालजी म सा. की स्मृति मे श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ ने श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार की स्थापना की । ज्ञान भण्डार मे अनेकानेक प्रकाशित एवं हस्तलिखित ग्रन्थो का सग्रह हुआ है । हस्तलिखित अप्रका-शित ग्रन्थो का सचयन कर उन्हे भी अ भा सा. जैन साहित्य समिति सर्वजन-हितार्थ प्रकाशित कर रही है । इसी सकल्प की क्रियान्विति मे इसे भी श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार से प्राप्त कर प्रकाशित करने मे सघ हार्दिक सन्तुष्टि का अनुभव कर रहा है ।

प्रस्तुत पुस्तक का सुन्दर प्रणयन आचार्य प्रवर के अन्तेवासी सुशिष्य विद्वद्वर्य ओजस्वी प्रवक्ता श्री ज्ञानमुनिजी म सा ने किया है । श्री ज्ञानमुनिजी ने मात्र १४ वर्ष की

वय मे आचार्य-गुरुदेव के सान्निध्य मे दीक्षित होकर १६ वर्ष की वय मे परीक्षा बोर्ड की सम्पूर्ण साधुमार्गी परीक्षाओ को प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण कर परीक्षाबोर्ड मे एक कीर्तिमान स्थापित किया है। मुनिश्री प्रखर मेधा के धनी होने के साथ ही प्रखर व्याख्याता है।

मुनिश्री की प्रखर मेधा ने साहित्य की विभिन्नविधाओ मे साहित्य-रचनाकर साहित्य श्री मे विशिष्ट अभिवृद्धि की है। आपश्री ने मुक्तक—सगीत-चिन्तन-इतिहास-उपन्यास-कविता आगम आदि अनेक विध साहित्य का सर्जन एव सम्पादन किया है। आपकी सम्यक् ज्ञान के साथ तप सयम की आराधना आचार्य-प्रवर के सान्निध्य मे सतत प्रगतिशील है। हमे आपश्री के व्यक्तित्व—कृतित्व के प्रति गौरव है।

प्रस्तुत 'प्रकृति भी मुखर हो उठी' नामक पुस्तक मे मुनिश्री ने अपने प्रखर चिन्तन के माध्यम से प्रकृतिगत अवस्थाओ को कथात्मक शैली मे प्रस्तुत करने के साथ ही मानव को मार्मिक प्रेरणा भी दी है। इसमे जहा पाठक की कथा-लिप्सा पूर्ण होती है वहा साथ-साथ मे आत्मा के गुणो का भी ज्ञान होने लगता है।

पुस्तक लघु होते हुए भी विशिष्ट एवं उपयोगी है। आशा है पाठक इससे लाभान्वित होगे। □

चुन्नीलाल मेहता	धनराज बेताला	गुमानमल चोरड़िया
अध्यक्ष	मन्त्री	सयोजक
अ भा. साधुमार्गी जैन सघ		साहित्य समिति

प्रकृति भी मुखर हो उठी

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से मानव के उद्भव एव विकास के विषय मे सोचा जाय तो ज्ञात होगा कि आदिमकालीन युग मे मानव पशु की तरह जीवन व्यतीत करता था। उस समय उसके पास रहने के लिये मकान, खाने के लिये स्वादिष्ट भोजन एव पहनने के लिये कपडे नही थे। जंगलो मे इधर से उधर परिभ्रमण किया करता था। आज की तरह का यात्रिकी विकास उस समय नही था। जैन-दर्शन की दृष्टि से आदिम कालीन युग, यौगलिक काल के रूप मे प्रतिपादित हुआ है।

मानव अपने चिन्तनशील मस्तिष्क का उपयोग तथा आदिमकालीन युग की परिधियो को पार कर विकास के सोपानो पर निरन्तर आगे बढ़ता चला गया और आज भौतिक दृष्टि से बहुत कुछ समृद्ध बन चुका है। पर इस विकास के पीछे वह नेच्युरल-प्राकृतिक जीवन से पिछडा ही नही अपितु बहुत दूर चला गया। आज तो अधिक से अधिक अप्राकृतिक प्रायोगिक जीवन मे ही जी रहा है। खान-पान, रहन–सहन आदि सभी कार्यो मे विभाव का ही रूप विशेप रूप से उभरता चला जा रहा है। इन वैभाविक परिणतियो के कारण ही सुखी जीवन से वह बराबर वचित रह रहा है। शान्त और सुखी बनने के लिये हमे विकासशील युग के साथ ही प्राकृतिक जीवन मे जीना होगा। प्राकृतिक चिकित्सा को भी इसीलिये महत्त्व दिया गया है। आयुर्वेदिक एव

ऐलोपैथिक चिकित्सा से जो रोग शात नही होता, उसे प्राकतिक चिकित्सा जड़मूल से उखाड कर फेंक देती है, क्योकि मानव का रोग जहा से प्रारम्भ हुआ है, प्राकृतिक चिकित्सा उसे वही ले जाकर खडा कर सशोधित करने का प्रयास करती है ।

उत्पत्ति के साथ ही मानव मे कषाय एव विषयो का उभार बहुत कम प्रतीत होता है पर ज्यो-ज्यो वह दुनिया के रगमच पर बढने लगता है,त्यो-त्यो उसमे विकृतिया घर करती चली जाती है, क्योकि उसके आसपास का परिकर उसे लगभग अप्राकृतिक एवं विषयो से भरा मिलता है। वर्तमान के इस वातावरण को देखते हुए कहते है कि सदियो से मौन रहने वाली प्रकृति भी मुखर हो उठी । उसे अपनी गोद मे जीने वाले सर्वश्रेष्ठ मानव के भीतर प्रवेश करने वाली विकृति कतई सहन नही हुई और वह भिन्न-२ तरीके से मानव को स्वभावस्थ करने के लिये समझाने लगी। प्रकृति के इस मौखर्य को कल्पना के आधार पर प्रस्तुत करने का प्रयास इस 'प्रकृति भी मुखर हो उठी' के अन्दर किया गया है । चिन्तनशील मानव को सुख की सच्ची सुवास प्राप्त करने के लिये स्वाभावस्थ होना ही होगा । सर्प कितना भी टेढा-मेढा चल ले, पर बिल मे प्रवेश करने के लिये तो उसे सीधा ही होना होगा । मानव ने भी शान्ति को प्राप्त करने के लिये बहुत दौड लगा ली । भिन्न-भिन्न तरीके से बहुत प्रयास कर लिये, फिर भी इच्छित शांति की उपलब्धि तो नही हुई वरन् वह और अधिक अशान्त एवं उद्विग्न बनता चला गया । अत. मानव को शाति पाने के लिये अप्राकृतिक टेढापन छोडना होगा ।

जितने भी अतीत मे महापुरुष हुए, लगभग सभी ने अपनी आत्म-शक्ति को जागृत करने के लिये अप्राकृतिक

परिकर से हटकर प्राकृतिक क्षेत्र मे रहना पसन्द किया था अर्थात् भौतिकता की आसक्ति से हटकर अध्यात्म मे रमण किया था इसलिये परम शाति की अनुभूति की ।

पर बडे-२ बगलो मे रईसो की तरह जीने वाला इन्सान अपने दु खो का अन्त नही कर सका । अत शाति को प्राप्त करन के लिये प्रकृति की मुखरता को सुनने का प्रयास करे और उसे जीवन मे स्थान दे ताकि हमारी आत्मा का प्राकृतिक रूप उभर सके ।

ममता-विभूति, अनन्त आराध्य, समीक्षरण योगी, अनन्य उपकारीगुरुदेव आचार्यभगवन् श्रीनानेश का पतित-पावन कृपा वर्षण एव सुखद सान्निध्य, मुझे साधना मे सतत गति दे रहा है । साथ ही मुनिकुमारो की ममतामयी माता, शासन प्रभावक, परम उपकारी इन्द्रचन्दजी म सा के मातृ वात्सल्य एव उपकारो को भी विस्मृत नही किया जा सकता है । दोनो महापुरुषो के प्रति असीम श्रद्धा को सजोए, प्रस्तुत है—

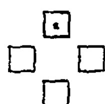
प्रकृति भी मुखर हो उठी

२९-८-८६ शुक्रवार
महावीर भवन नया वास
ब्यावर (राज)

मुनिज्ञान



समर्पण



जिनके सम्यक्
साधनाशील
उत्तुङ्ग-गिरि से
प्रवाहित
समता निर्झर मे
आप्लावित हो
अमरता के
पथ का
पथिक बना
उन्ही
अनन्त-अनन्त आराध्य
गुरुदेव
आचार्य श्री नानेश
को

मुनिज्ञान

महावीर भवन, नया बास — २६-८-८६

ब्यावर (राज.) — शुक्रवार

मर्यादा ही उत्तम आचरण का सुरक्षा कवच है, प्रभु महावीर का संदेश है कि आचरण की धारा सम्यक्ज्ञान के चट्टानी तटबन्धों मे ही मर्यादित रहनी चाहिये।

आचार्य स्वर्गीय गुरुदेव श्री गणेशीलालजी म. सा. ने श्रमण सस्कृति की सुस्थिति एवं उन्नयन के लिये शात-क्रान्ति का अभियान चलाया, इस अभियान को ओजस् प्रदान करना साधुवर्ग का दायित्व है, इसके लिए साधुवर्ग को जहा साधना के पथ पर अविचल रूप मे आरूढ रहना है वही अपनी साधनागत अनुभूतियो की अभिव्यक्ति द्वारा सामान्य जन के लिए सुदृढ साधना सेतु का निर्माण भी करते चलना है। "शान्त-क्रान्ति" आत्म-साधना से ही परात्म-साधना के उदय का अभियान है जो आत्म पक्ष, परात्म-पक्ष एव परमात्म पक्ष तीनो को उजागर करने मे सक्षम है। साधु समाज ने विगत पच्चीस वर्षो मे सम्यक् ज्ञानार्जन की दिशा मे अच्छी दूरी तय की है, रथ बढ रहा है पथ भी प्रशस्त हो रहा है ....।

—आचार्य श्री नानेश[1]

---

1 प्रवचनांश

यत्किञ्चित्

"प्रकृति भी मुखर हो उठी" पुस्तक को मैंने आद्योपान्त्य श्रवण किया। कलेवर की दृष्टि से कृशकाय होने पर भी इसमे उल्लिखित सवाद ऐसे है जो जीवन को समग्रता, सार्थकता एव पुनीतता प्रदान करने का सामर्थ्य रखते है। मानवजीवन की दुर्बलताओ को उजागर करके निर्दोष बनाने की एव सर्वोपरि अभ्युदय की दिशा का निर्देश करते है।

ये सवाद आबालवृद्ध' जैन-जैनेतर सभी धर्म के अनुयायियो, सभी वर्गो और वर्णो के विचारवान जनो के लिए समान रूप से उपयोगी है—उपकारी है। इनमे नैतिकता और धार्मिकता का अद्‌भुत समन्वय है। लेखक का दृष्टिकोण जन-साधारण को ऐसा सदेश देने का रहा है, जिसमे देवदुर्लभ यह मानवजीवन दिव्य और भव्य रूप मे पलट सके। यही कारण है कि भाषा को अलकृत बनाने के झमेले मे न पडकर अतीव सरल, सुबोध एव सामान्य से सामान्य योग्यता वाले पाठको की समझ मे आ जाने वाली भाषा का प्रयोग किया गया है।

पुस्तक के लेखक श्री ज्ञानमुनिजी महाराज सार्थकनामा है। अल्पवय मे भी उन्होने सस्कृत-प्राकृत आदि भाषाओ और दर्शन आगम आदि विषयो का गहरा अध्ययन किया है। यही नही उनकी प्रज्ञा कुशाग्र है, वे नैसर्गिक प्रतिभा

सम्पन्न है । प्रस्तुत पुस्तक इस तथ्य की साक्षी है कि उन्होंने प्रकृति का भी गम्भीर रूप मे अवलोकन, चिन्तन और मनन किया है । वे साधारण-सी प्रतीत होने वाली घटना से कितना महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकालते है और पाठको के समक्ष प्रस्तुत करते हैं, यह देखकर किसे सुखद आश्चर्य न होगा वही सत्पुरुष ऐसा कर सकते है जो ज्ञान के साथ सयम की साधना मे भी निरन्तर निरत रहते है ।

इस पुस्तक को प्रस्तुत करने के लिए श्री ज्ञानमुनिजी महाराज बधाई के पात्र है । आशा है भविष्य मे भी मुनिश्री की प्रकृष्ट प्रतिभा अन्यान्य ग्रन्थ रत्नो से साहित्य-भण्डार को समृद्ध बनाएगी ।

—शोभाचन्द्र भारिल्ल

वीर सवत् २५१३
चम्पानगर, व्यावर



अनुक्रमणिका

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
१	कुसुम और कटक	१
२	मिट्टी और कुंभकार	२
३	धरती का आज्ञाकारी पुत्र	५
४	लोहा और लुहार	६
५	मूर्ति और शैतान	८
६	कलम और कागज	९
७	क्रोध और मान	१०
८	ईश्वर और आदमी	११
९	नर और वानर	१२
१०	नदी और शैतान	१३
११	बादल और हवा	१४
१२	कीचड और कमल	१६
१३	दात और जीभ	१७
१४	प्रकाश और अंधेरा	१८
१५	चेहरा और दर्पण	१९
१६	दारू और दारूडिया	२०
१७	धोबी और कपडा	२१
१८	आम्र वृक्ष और खजूर वृक्ष	२२

क्रमाक	विषय	पृष्ठ सख्या
१९.	ताला और चाबी	२३
२०.	फूल और माली	२४
२१.	कौआ और आदमी	२५
२२	धरती और अंबर	२६
२३.	दूध और पानी	२८
२४	पत्थर और नदी	२९
२५	चोर और तिजोरी	३०
२६	खरगोश और शिकारी	३१
२७.	हल और धरती	३२
२८.	लोहा और आग	३३
२९	शेर का मतव्य	३४
३०	नदी और समुद्र	३५
३१.	गैस-सिलेण्डर	३६
३२	हीरे का मूल्याकन	३८
३३	गुड मोर्निंग ही गुड इवनिंग है	४०
३४.	हाथी और कुत्ता	४२
३५.	ना समझ कौन ?	४४
३६	चातक शिशु का निश्चय	४६
३७.	ड्राइवर और गाडी	४८
३८.	हीटर और कूलर	४९
३९	संघर्ष नदी और समुद्र का	५१
४०	संगति किसकी करे ?	५३
४१	दीपक और भास्कर	५४
४२.	नर्तकी और सितार	५६
४३.	शेर और कुत्ता	५७

क्रमांक	विषय	पृष्ठ सख्या
४४.	पतग और बालक	५९
४५.	मेढक की बातचीत	६१
४६.	घट और पानी	६३
४७.	कछुए की वह रात	६५
४८.	इन्सान और फूल	६७
४९.	बीज का वृक्ष	६९
५०.	कीचड और कंजूस	७१
५१	वश-दल का घर्षण	७३
५२	पतगिये की भिनभिनाहट	७५
५३.	मकड़ी का जाल	७७
५४	सर्प का संदेश	८०
५५.	मूर्खता किसकी ?	८२
५६	चिड़िया का सदेश	८४
५७.	गिलहरी का अथक परिश्रम	८६
५८	मूषक का स्वार्थ	८९
५९	कुत्ते की आदत	९२
६०.	कुत्ते की नासमझी	९४
६१.	हवा और बादल का सघर्ष	९६
६२.	चन्दन वृक्ष और सर्प	९८
६३	इलेक्शन-सौरमण्डल का	१०१
६४.	गधे की पुकार	१०४
६५.	सृष्टि का विचित्र प्राणी	१०७
६६.	पाषाण की महत्ता	१०९

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
६७	अपात्र को शिक्षा	११२
६८	दीपक का धुआं काला क्यों ?	११४
६९	वार्ता. चलनी और सुई की	११६
७०	लोहा, सोना कैसे बने ?	११८
७१	स्वार्थ आदमी का	१२०



(१)

कुसुम और कंटक

फूल का सहवासी कांटा, फूल का अधिकाधिक सम्मान देखकर ईर्ष्यावश चीख उठा—क्यों, लोग तुम्हें ही पूछते हैं, ऐसी क्या करामात है तुममें कि दूर दूर से मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी भी खींचे चले आते हैं और तुम्हें अपनाने के लिए लालायित रहते हैं। लेकिन मुझे तो अपनाने की बात तो दूर रही छूना भी पसंद नहीं करते। मुझसे इतनी अधिक छुआछूत रखते हैं कि जब वे तुम्हें लेने के लिये आते हैं तो बड़े सतर्क रहते हैं। कहीं मैं उनको छू न जाऊं। आखिर क्यों, मेरे से इतना भेदभाव रखा जाता है?

मंद मंद सुगंध बिखेरते हुए—मुस्कराते हुए फूल ने कहा—दोस्त! लोग इसलिए मुझे लेने के लिए आते हैं कि मैं उन्हें भीनी-भीनी सुगंध देता हूँ। उन्हें प्रफुल्लता एवं ताजगी से भर देता हूँ। भले वे मुझको तोड़कर अलग भी कर दें, मैं मुर्झा भी जाऊं तो भी जीवन के अन्तिम क्षणों तक उन्हें सुगंध ही सुगंध देता रहता हूँ इसलिये लोग मुझे चाहते हैं। जब तुम भी अपने जीवन में परिवर्तन कर लोगे तो लोग तुम्हें भी चाहने लगेंगे पर तुम ऐसे हो कि कोई तुम्हारे हाथ भी लगा दे तो इतने अधिक भटक उठते

हो कि उसके हाथ से रक्त की धारा वह उठती है। ऐसी स्थिति मे लोग तुम्हे क्यो चाहेगे ? उपादेय बनने के लिये अपने मे कुछ परिवर्तन तो करना ही होगा।

"नही--नही, मै अपना स्वभाव नही बदल सकता। काटे की इस बात को सुनकर फूल ने कहा—तब तुम्हारे साथ लोग ऐसा ही बर्ताव करेंगे। तुम्हारा साथी यदि उनके पैरो मे चुभ गया है तो तुम्हारे साथी ही उसे बाहर निकाल फेकेगे। ऐसी स्थिति मे तुम पैरो से भी स्पर्श करने योग्य नही हो।

काटा, फूल की सच्चाई का प्रतिकार नही कर सका दुर्मन व्यक्ति अपने स्वभाव को बदल नही सकते है तो वे कदापि शाश्वत रूप से उन्नति नही कर सकते हैं और न उन्हे कोई चाहता है। वे अपनी ईर्ष्या की आग मे ही जलकर भस्म हो जाते है।



[प्रकृति भी सुन्दर हो उठी

(२)

मिट्टी और कुंभकार

बार–बार पैरो तले कुचले जाने के कारण मिट्टी अपने भाग्य पर रो पडी । अहो ! मैं कैसी बदनसीब हूँ कि सभी लोग मेरा अपमान करते है । कोई भी मुझे सम्मान की दृष्टि से नही देखता और मेरे ही भीतर से प्रस्फुटित होने वाले फूल का कितना सम्मान है । लोग उन्हे गले मे माला पिरोकर पहनते है । भक्त लोग अपने उपास्य के चरणो मे चढाते है । वनिताए अपने बालो मे गूंथ कर गौरव का अनुभव करती है । क्या ही अच्छा हो कि मैं भी लोगो के मस्तक पर चढ जाऊँ ?

मिट्टी के अन्दर से निकलती हुई आह को जानकर कुंभकार बोला—मिट्टी बहिन ! यदि तुम सम्मान पाना चाहती हो तो तुम्हे बहुत बडा सम्मान दिया सकता हूँ लेकिन एक शर्त है ।

एक क्या, जितनी भी तुम्हारी शर्तें हो, मुझे सभी स्वीकार है । बस मुझे लोगो के पैरो तले से हटा दें कुंभकार की बात को बीच मे ही काटते हुए मिट्टी ने कहा ।

तो फिर ठीक है, तैयार हो जाओ—कहते हुए कुंभकार ने मिट्टी जमीन में खोदकर बाहर निकाली। गधों की सवारी कराता हुआ उसे घर ले आया। पानी में डालकर उसे बहुत समय तक आर्द्र (गीली) रखी। इतना ही नहीं फिर पैरों से खूब रौंदा। कष्टों को सहते हुए मिट्टी बोली—अरे भाई! बहुत कष्ट दे रहे हो। कब मुझे सम्मान का पात्र बनाओगे?

मिट्टी बहिन! धैर्य रखो। सहते जाओ सभी। जरूर तुम्हें उसका मधुर फल मिलेगा। कुंभकार की बात सुनकर मिट्टी कुछ नहीं बोली।

कुंभकार ने उसे चाक पर चढ़ाया और चाक को जोरों से घुमाकर घड़े का रूप दिया। धूप में सुखा दिया। कष्टों को सहते-सहते मिट्टी का धैर्य टूटने लगा तो कुंभकार बोला—बस-बस बहिन! अब एक अग्नि परीक्षा ही बाकी है और सभी में तुम पास हो चुकी हो। यदि उसमें उत्तीर्ण हो जाओगी तो सती सीता की तरह लोग तुझे भी मस्तक पर चढ़ा लेंगे। क्योंकि वह अग्नि परीक्षा पूर्ण उत्तीर्ण हुई थी। इसीलिए सीता को लोग मस्तक झुकाकर सम्मान देते हैं किन्तु तुम्हें तो वनिताएं मस्तक पर चढ़ा कर घूमेंगी।

आखिर मिट्टी ने सब कुछ सहकर अग्नि परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली। फिर क्या था। वनिताएं उसे प्रतिदिन मस्तक पर उठाकर इधर-उधर ले जाने लगीं।

मिट्टी अपना इतना सम्मान देखकर प्रफुल्लित हो उठी।

इसलिए महान बनने के लिये कष्ट परिषह तो सहने ही पड़ते हैं।

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

(३)

धरती का आज्ञाकारी पुत्र

धरती माता ने अपने सभी पुत्र-पुत्रियो को जन्म के साथ ही सत् शिक्षाएँ दी थी। जिन्हे एक पुत्र के सिवाय सभी अच्छी तरह से पालन कर रहे है परिणाम स्वरूप उस एक के अतिरिक्त सभी सुखी है।

बेटियो ! धरती मा ने गगा-यमुना-सरयू को शिक्षा देते हुए कहा था कि तुम्हे अपने पानी को सदा निर्मल बनाए रखना है। चाहे तुम्हारे मे कितनी ही गदगी डाली जाए, तुम्हे गदगी के साथ मिलकर अपने स्वभाव को नही छोडना है।

गगा-यमुना-सरयू ने मा की बात को अक्षरश स्वीकार किया। इसी कारण आज भी लोग उन्हे पूजते आ रहे है।

बेटे हिमालय को भी धरती मा ने शिक्षा दी थी कि उन्हे हर तूफान मे अडिग बने रहना है। वह भी मा की आज्ञा का पालन कर रहा है। लोग उसे भी गौरव की दृष्टि से देख रहे है।

ठीक इसी प्रकार मा ने अपने अन्यान्य सतानो को

शिक्षा देते हुए अपनी श्रेष्ठतम संतान मानव को भी शिक्षा देते हुए कहा—पुत्र ! तुम मेरे सबसे अधिक प्रिय एवं बुद्धिमान पुत्र हो। तुम अपनी बुद्धि का प्रयोग सदा परोपकार मे करोगे। दीन-दुखियो के प्रति आत्मीयता का व्यवहार करोगे। यदि तुम मेरी शिक्षाओ को जीवन मे उतार लोगे तो निश्चय ही पूरे विश्व पर तुम्हारा एकाधिकार प्राप्त होगा। तुम्हे वहा अमनचैन मिलेगा। जो तुम्हारे सिवाय किसी अन्य के लिए संभव नही है।

किन्तु मानव ने मा की आज्ञा का पालन नहीं किया इसलिए वह आज पशु से भी अधिक दुःखी जिंदगी व्यतीत कर रहा है।



(४)

लोहा और लुहार

अधिक कठोर तत्वो को तरल बनाने की आधुनिक टेकनीक खोज निकाली है।" हथोडो की चोटे लगाते हुए लुहार बोला।

लेकिन फिर भी जब लोहे को पिघलते नही देखा तो लुहार क्रोध से तमतमा उठा। उसने लोहे को अग्नि मे तपाना प्रारम्भ किया। कुछ ही समय के बाद लोहे की रग-रग मे अग्नि प्रवेश कर गई। लोहा तपकर लाल सुर्ख हो गया। अपने शरीर को अग्नि मे इस प्रकार जलते देखकर लोहे की अक्कड काफूर हो गई। वह बोला—तुम चाहो वैसे ढल जाऊँगा, अब तुम मुझे जलाना बद कर दो।

मार के पीछे तो भूत भी भागते हैं, बालते हुए लुहार ने कहा—ठीक है तुम मेरी बात मान गए अब मैं तुझे शीतल कर देता हूँ।

पूर्ण शाति प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को अपनी अक्कड की पकड छोडनी ही होगी।



आज की दुनिया मे परिवर्तन हो रहा है।
आदमी आदमी न रह शैतान हो रहा है।
बदलते हुए रूप को देखकर लगता है मुझे
मुनीम ही अब दुकान का मालिक हो रहा है।।

(५)

मूर्ति और शैतान

कुशलता पूर्वक बनायी गई, नयनाभिराम मूर्ति का [illegible] को देखकर शैतान बोला—तुम कितने सुन्दर लगते हो ना। तुम्हारी रमणीयता प्रत्येक दर्शक को अपनी

(६)

कलम और कागज

अपने ऊपर आती हुई कलम को देखते ही कागज ने कहा—जब भी तुम आती हो, मुझे सिर से लेकर पैर तक काले रग से रग देती हो। मेरी सारी शुक्लता और स्वच्छता को विनष्ट कर देती हो।

कलम ने कहा—देखो, मै तुम्हारी शालीनता-स्वच्छता भग नही कर रही हूँ। बल्कि तुम्हारी उपादेयता मे निखार ला रही हूँ। जब तुम्हे मैं अक्षरो की रगीनता से भर देती हूँ तो लोग तुम्हे सुरक्षित रखते है। समझदार व्यक्ति की दृष्टि मे कोरे कागज का कोई विशेष महत्त्व नही होता। यदि इसमे कुछ न कुछ लिखा होता है तो हर व्यक्ति अवश्य उसे उठाता है और पढने की कोशिश करता है तो भाई तुम्हारे ऊपर जितना अधिक लेखन होगा। तुम्हारी उतनी ही अधिक उपादेयता बढती जाएगी।

कलम की सत्य बात को कागज ने सहर्ष स्वीकार कर ली।

ऊपरी कालेपन या गोरेपन का इतना कोई महत्त्व नही है। महत्त्व तो उसका है कि इसके अन्तस्तल में उपयोगी वस्तु क्या है?

क्रोध और मान

एक ही आत्मा के साम्राज्य पर आधिपत्य जमाने वाले क्रोध और मान परस्पर टकरा गए। क्रोध ने मान से कहा-"छोड दो मेरे साम्राज्य को। आत्मा पर एक मात्र मेरा ही आधिपत्य रहेगा।" मान ने कहा—"नही। तुम हटो। इस पर मात्र मेरा ही आधिपत्य रहेगा।" दोनो मे बहुत देर से तू तू, मैं मैं होती रही। इसी बीच शैतान ने कहा--"अरे ! ऐसे मत चिल्लाओ। अगर मानव जाग गया तो तुम दोनो को निकाल बाहर कर देगा। दोनो सहम गए। आखिर दोनो ने मिलकर एक रास्ता निकाल लिया। अह-मान ने कहा—देखो। मेरा साम्राज्य अधिकतर मानव के अन्तरग मे रहेगा और तुम्हारा साम्राज्य मानव के बहिरग मे रहेगा। क्रोध ने मान की बात मान ली।

आज भी अह मानव के भीतर रहकर काम करता है और क्रोध बाहर। किसी व्यक्ति ने किसी को अपशब्द कहा तो अभिमान अदर मे फूकार मारता है तो क्रोध बाहर से चिल्ला उठता है।

यह आपेक्षिक दृष्टिकोण है।



(८)

ईश्वर और आदमी

एक बार आदमी ने तथाकथित सृष्टि के कर्त्ता ईश्वर से शिकायत की । तुमने मुझे धोखा दिया है । पूरे जगत मे यह प्रचारित कर कि मानव दुनिया का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है । लेकिन मै कहूँगा कि नही । पशु, मुझ से भी अधिक श्रेष्ठ है । जो सुख की नीद तो सोते है । जिन्हे किसी प्रकार का मानसिक या शारीरिक दु.ख नही रहता । जब-कि मेरे साथ तूने सारे ही दु.ख लगा दिये हैं । ये बगला, कार, हवाईजहाज आदि सारी सुख सामग्री तुमने हमको नही दी है । यह तो मैंने अपने ही दिमाग से बनाई है । तुमने तो जो शाति पशुओ को दी है, उतनी भी हमको नही दी ।

मानव की अन्तर्वेदना को सुनकर द्रवित होते हुए ईश्वर बोला—देखो भाई ! मैंने जो कुछ भी कहा, बिल्कुल सत्य कहा है । सारी दुनिया भी यही मानती है । मैंने सुख का जितना बडा खजाना तुम्हे दिया है, उतना किसी को नही लेकिन तुम उस खजाने की ओर ध्यान न देकर सुख की खोज बाहर ही बाहर कर रहे हो । अपने प्राणो की बहुमूल्य ऊर्जा को बाहरी तत्वो मे खर्च कर रहे हो । इसी कारण दुखी बन रहे हो । जरा बाहर से हटो—अन्तर्मुख

वनो । तुम्हे शान्ति का अखूट खजाना मिलेगा । मैंने वह खजाना वही रख रखा है ।

मानव उस ओर ध्यान नही दे रहा है, इसलिये दु ख का पात्र बन रहा है ।



(६)

नर और वानर

दो पथिक एक विशाल सघन-वृक्ष को देखकर थकावट दूर करने के लिये उसकी छाया मे बैठकर सुस्ताने लगे ।

एक पथिक ने वृक्ष पर बैठे बन्दर को देखकर दूसरे पथिक से कहा—देखो । यह बन्दर बडा नकलची होता है । इसमे अक्कल नही होती । यह हर चेष्टा की नकल कर लेता है, लेकिन उसके हानि लाभ को नही समझ पाता ।

दूसरे पथिक ने कहा—हा भई ! बात तो सही है । वह नकल कर सकता है पर इसमे अक्कल नही होती ।

बन्दर इन दोनो की बातो को सुनकर चिढका—तुम नकलची बता रहे हो लेकिन जरा तुम अपने विषय मे भी तो सोचो—तुम भी नकल ही कर रहे हो । अक्कल कहा लगा रहे हो ? देखो हर आदमी रोटी खाता है, पानी

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

पीता है । तुम भी रोटी खाते हो, पानी पीते हो । धन कमाना, बच्चे-बच्ची पैदा करना सारे कामो मे तुम भी दूसरो की नकल ही उतार रहे हो । यही नही पाश्चात्य संस्कृति की तो पूरी की पूरी नकल कर रहे हो । खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा, बोल-चाल मे बस पाश्चात्य संस्कृति की ही नकल उतारने मे लगे हो । यह तो बतलाओ कि तुमने किस काम मे अक्कल लगाई है । तुमने मस्तिष्क होते हुए भी अक्कल नही लगाई इसलिये तुम मेरे से भी गए बीते सिद्ध हुए हो । बन्दर की सच्चाई सुनकर दोनो ही पथिक चुपचाप उठकर रवाना हो गए ।



(१०)

नदी और शैतान

हिमगिरि के उत्तुङ्ग शिखर से प्रवाहित हो कल-कल, छल-छल का निनाद करती हुई, सुख एव आनद मे इठलाती नदी अपनी अपावन को पावन बनाने वाली सलिल धारा से धरती को अभिसिंचित करती हुई विशाल जल राशि मे अपने अस्तित्व को विलीन करने के लिये आगे बढती चली जा रही थी ।

नदी के इस स्वभाव को देखकर कषाय रूप कीचड

से सने, हैवानियत का रूप धारण किये शैतान ने नदी को सबोधित किया—अहो ! महद् आश्चर्यम् ! दुनिया तुम्हारे मे कितना कूड़ा-कचरा, अशुचि डालती है, पर तुम अपने आप-को उससे निर्लिप्त रखकर अपनी परम-पवित्र धारा मे ही प्रवाहित रहती हो। लोग तुम्हे पूजते है। मुझे भी लोग तुम्हारी तरह क्यो नही पूजते।

नदी के कल-कल निनाद के रूप मे वाणी मुखरित हुई—देखो भाई ! तुम भी निश्चित रूप मे उपास्य वन सकते हो। पर लोगो की दृष्टि मे सम्मानित वनने के लिए कुछ तो अपने मे रूपान्तरण लाना होगा। मेरे अन्दर कितना भी कूडा-कचरा प्रक्षिप्त कर दिया जाता है, मै अपने आप-उसमे लिप्त नही करती। अपने ही स्वभाव मे गतिशील रहती हूँ। इसीलिए लोग मुझे पूजते हैं। तुम भी, ऐसा ही स्वभाव अपना लो तो लोग तुम्हे भी पूजने लगेगे।

सत्य है—आत्मा, विभाव मे हटकर स्वभाव मे पूर्ण-तया लीन हो जाती है तो सपूर्ण जगत् की उपास्य वन जाती है।



(११)

बादल और हवा

काले कजरारे भीमकाय बादलो को देखकर आदमी भय के मारे काँप उठा—यदि ये बादल सारे ही यही बरस पड़े तो प्रलय हो जायेगा। प्रार्थना की, मानवो ने, मेघ ने—हे मेघराजा! तुम थोडा थोडा बरसो। अन्यथा तुम्हारा यह उपकार हमारे लिये घातक सिद्ध होगा। किन्तु मेघ ने एक नही सुनी और जोर से गर्जन-तर्जन करने लगा।

हवा ने यह देखकर मेघ से प्रार्थना की—मेघ देवता! देखो अपना काम जनता का उपकार करना है, आप ऐसा न करे कि जिससे प्रलय की स्थिति बन जाय।

घटाटोप बादल घडघडाया, दुबली-पतली हवा को देखकर--जा, जा बडी शिक्षाएँ देने चली है, अपना काम कर। मेरे काम मे हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नही है।

हवा ने कहा—मेघराज! मै आपके काम मे हस्त-क्षेप नही कर रही हूँ। किन्तु निवेदन इतना ही है कि आप अपने इस प्रलयकर रूप मे कुछ परिवर्तन कर ले। लेकिन जब मेघ अपनी बात पर ही अडा रहा तो हवा ने प्रलय से लोगो की रक्षा करने के लिए तूफानी रूप धारण किया कि भीमकाय बादल तितर-बितर हो गया।

धनवान यदि अपने स्वार्थ मे पडकर गरीबो की नही सुनता है तो उन गरीबो की नि सत्व सी प्रतीत होने वाली आह भी, उसके वैभव को इसी प्रकार तितर--बितर कर देती है ।



(१२)

कीचड़ और कमल

कीचड ने कमल से कहा—बडे आश्चर्य की बात हे कि आखिर तू पैदा तो मेरे उदर से ही हुआ है लेकिन दुनिया तेरे पास तो दौड-दौड के आती है और मुझसे दूर भागती है । तुम्हारे प्रति आकर्पित होती है और मुझ से घृणा करती है । आखिर ऐसा क्यो ?

कमल ने कहा—कीचड ! निश्चय ही तुम्हारा मेरे पर बहुत उपकार है । मै यह उपकार कदापि नही भूल सकता । लेकिन तुमने मेरे मे तो सुन्दरता और खुशबू भर दी । पर तुम वैसे के वैसे ही दुर्गंधमय और असुन्दर ही रहे हो, जब तक तुम अपने को नही बदलोगी, तब तक घृणापात्र ही बनी रहोगी ।

आज के कई उपदेशको की वाणी सुनकर भद्रिक आत्माएँ साधनाशील हो रही है । किन्तु वे उपदेप्टा अपने को नही बदल पाने के कारण वही के वही अटके हुए है ।

(१३)

दांत और जीभ

दांत और जीभ एकवार आपस मे टकरा गए। दांतो की चोट को जीभ सहन नही कर पाई। खून की धारा निकलने लगी। खून को देखकर जिह्वा क्रोधित हो उठी। और दांत को लताडने लगी। अरे निर्दय! तू जिसकी थाली मे खाता है, उसी मे छेद करता है। मेरे लिए जो वस्तुएं आती है, उन्ही को तू चबाता है और मुझे ही काटने लगा है। याद रख यदि मैंने तेरा साथ नही दिया तो तू कुछ नही कर पाएगा।

दांत ने कहा—अहो जिह्वारानी! क्यो चिल्लाती हो। इसमे गल्ती मेरी है या तुम्हारी? मैं अपना काम कर रहा था। तुम पहले ही चटखारा लेने के लिए मेरे काम के बीच मे चली आई। यदि दूसरो के कामो मे टाग अडाओगी तो फिर ऐसा ही फल पाओगी। याद रखो आज तो मैंने थोडी ही चोट पहुँचाई है। अगर आगे ने मेरे कामो मे टाग अडाई तो काट के अलग करूंगा।

दांत की जोश भरी बात को सुनकर जिह्वा सहम गई और अपने काम मे लग गई।

दूसरो के कामो मे निरर्थक अपनी टाग अडाना निश्चय ही स्वत के लिए हानिकारक है।

(१४)

प्रकाश और अंधेरा

अग-जग को प्रकाशित करने वाले सूर्य के प्रखर प्रकाश मे भी अंधेरा देखकर रजनीपति उल्लू चीख उठा—अहो ! दुनिया कितनी पागल है। सभी कहते है सूर्य प्रकाश देता है, लेकिन कहा, मै तो अंधकार ही अंधकार देख रहा हूँ, प्रकाश होता तो मुझे भी दिखलाई देता। सूर्य प्रकाश देता है, यह मात्र लोगो की बकवास है।

उदित होते हुए सूर्य ने उल्लू की चीख को सुनकर उसे समझाया—भाई ! मै प्रकाश देता हूं, सारा जगत् इसका साक्षी है। तुम्हारे जैसो को छोडकर दुनिया के किसी भी व्यक्ति को पूछ सकते हो। रात्रि के अन्दर सोने वाले सभी उठ बैठे है, जो कि मेरे प्रकाश का प्रमाण है।

"मैं नही मानता इसको" उल्लू ने अकडकर कहा।

तब सूर्य बोला—तुम मानो या न मानो, इससे मुझ मे कोई फर्क नही पडता। अन्य अनेको के समझाने पर भी उल्लू अपनी ही बात पर डटा रहा।

खैर ! वह समझ ही नही सकता। क्योंकि स्वय ही गलती पर है, उसकी प्रकृति ही ऐसी है।

दुराग्रही व्यक्ति को दुनिया की कोई भी शक्ति समझा नही सकती।

चेहरा और दर्पण

चेहरे ने दर्पण को कहा—तुझे अपने आप पर बहुत घमड है। चमक-चमक कर तू मुझ पर अपना रोब जमाता है, कर तो कुछ सकता नही। बिब जब तुम्हारे सामने आता है, तो ही प्रतिबिब तुम्हारे मे पडता है। सफाई का सारा काम तो मानव को ही करना होता है। तू क्या करता है?

दर्पण ने बहुत ही शालीनता के साथ कहा—भाई! इतना दर्प मत करो। आखिर तुम्हारी गदगी तो मेरे कारण ही दूर होती है। मेरे बिना तुम्हारी सफाई मानव भी अच्छी तरह नही कर सकता।

चेहरे ने कहा—नही-नही। यह तुम्हारा अभिमान है। तेरे बिना भी मेरा काम चल सकता। दर्पण ने कहा—ठीक,, जैसी तुम्हारी इच्छा। आखिर एक दिन दर्पण देखे बिना ही चेहरा मानव के साथ सभा मे जा बैठा। ज्यो ही सभा मे बैठा कि सभासदो को यह कहते हुए पाया कि-क्या आज तुमने अपना चेहरा दर्पण मे नही देखा ? कितने धब्बे पडे है चेहरे पर ?

यह सुनकर चेहरे को अपनी गल्ती महसूस हुई और दर्पण की सत्यता जाहिर हुई।

आज भी मानव महापुरुषो के आदर्शमय दर्पण को नही देखकर अपने गरूर मे दुनिया के चौराहो पर खडे होकर दु खो के थपेडो मे अपमानित किये जा रहे है।

"दारू और दारुड़िया"

लडखडाता हुआ दारुडिया गटर की गदी नालियो मे गिरते हुए दारू के प्रति दहाडा, साले ने मेरी इज्जत मिट्टी मे मिला दी । कहा तो मै आलीशान बगले के मखमली कालीन पर ऐश करता था और कहाँ इसने मुझे इस भयानक गदगी मे ला पटका है । सोचा तो मैंने यह था कि वह उल्लू का पट्ठा मुझे शाति देगा, किन्तु उसने तो मेरी रही सही शान्ति भी छीन ली ।

तब मादकता की जहरीली मुस्कराहट भरते हुए मदीरे न कहा--क्यो बे ! अब क्यो चिल्लाता है । मैंने कब कहा था-तुझे, मेरे पास आने को । तूने ही तो मुझे हसते उछलते उदरस्थ किया था । अब जब मै अपना प्रभाव दिखा रहा हूँ-तो तू चिल्ला रहा है ! तूने मुझे अपनाया है तो अपना पूरा काम किये बिना अब मै जा नही सकता ।

दारुडिया कुछ प्रतिकार कर पाता, उससे पहले ही वह भयानक दुर्गंध के कारण अपनी सुध-बुध खो बैठा ।

बिना सोचे समझे ही मानव भौतिकता के सुनहरे आकर्षण मे फसकर दुखी बनता जा रहा है ।

"धोबी और कपड़ा"

धोवी के हाथो वार-वार मार खाते हुए कपडे ने कहा-तुम वहुत निर्दयी हो। तुम्हारे मे बिल्कुल भी रहम नही हैं। मार-मार कर तुमने मुझे अधमरा कर दिया है।

धोवी ने कहा-दोस्त जब तक तुम अपनी मलिनता नही छोडोगे। तब तक तुम इसी तरह मार खाते रहोगे। मैं तुम्हारे मे हर वार स्वच्छता लाने की कोशिश करता हूँ और तुम पुन पुन गदे हो जाते हो।

कपडे ने कहा-मैं अपनी इस आदत को छोड नही सकता। तो फिर मैं भी तुम्हारी पिटाई नही छोड सकता। एक सोट और लगाते हुए धोवी ने कहा।

आत्मा भी जब तक कर्मो की गदगी नही छोडेगी। तब तक वह भी दु खो से इसी तरह पिटती रहेगी।



"आम वृक्ष और खजूर वृक्ष"

एक दिन जगल मे आम्र वृक्ष और खजूर वृक्ष मे चर्चा चलने लगी। खजूर के वृक्ष ने कहा—अरे तुम तो निरे मूर्ख हो। ज्यो-ज्यो तुम्हारे ऊपर फल लगते है, तुम झुकते जाते हो। एक बच्चा भी तुम्हारे ऊपर से बिना कुछ परिश्रम किये फल तोड लेता है। ऐसी विनम्रता का आज की दुनिया मे कोई सुफल नही मिलने वाला है। देखो ना, मै कितनी ऊचाइ पर फल लगाता हूँ, छोटे मोटे की बात तो दूर रही, बडे से बडे दक्ष व्यक्ति को भी फल पाने के लिये पसीने उतर आते है।

आम्र वृक्ष ने कहा—भय्या। पूर्व जन्मो के अशुभ कर्मो के कारण तो हम वृक्ष बने है। यदि इस जीवन मे भी थोडा बहुत उपकार करना नही सीखेंगे तो इस जीवन के साथ, आगामी जीवन भी निस्सार बन जाएगा। खजूर ने कुछ नही सुनी। वह अपनी ही अक्कड मे तना रहा।

थोडी ही देर मे भयानक तूफान आया। आम्र वृक्ष की डालिया झुकी होने से वह बच गया। किन्तु खजूर वृक्ष जो अपनी ही अक्कड मे तना हुआ था। तूफान ने उसे जडमूल से उखाड कर भूमि-सात् कर दिया।

आगामी जीवन को तो जाने दो, अभिमानी का वर्तमान जीवन भी बिगडता जाता है।

(१६)

ताला और चाबी

ताले ने अकडते हुए चावी मे कहा—अरे तू छोटोसी लकडी ! तुझे शर्म नही आती, मेरे पेट मे घुसते हुए। बडी होशियारी दिखाने लगी है लोगो को अपनी। मारे धन का रक्षण मैं करता हूँ और कमाल तू दिखाती है। चल हट। आइन्दे मेरे पेट मे घुसने की कोशिश मत करना।

चावी ने कहा—अरे ताले ! आज इतना बिगड क्यो रहा है ? तुझे अपनी ताकत पर इतना गरूर है तो ठीक है, आज से मैं तुम्हारे पास नही फटकू गी। चावी एक ऐसे कोने मे जा दुबकी कि मानव को मिली ही नही। तब आदमी ने आव देखा न ताव और हथोडे का प्रहार कर दिया ताले पर। दो चार चोटो से ही ताला तड-तड की आवाज करता हुआ अपने ही अभिमान के परिणाम स्वरूप एक ओर जा गिरा।

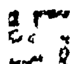


(२०)

"फूल और माली"

खिलते हुए फूल को देखकर माली ने कहा फूल से कितने सुन्दर लग रहे हो तुम ? तुम्हारी सौन्दर्य छवी, भीनी-भीनी सुगन्ध से भ्रमर स्वत ही आकर्षित होकर तुम्हारे पास आ रहे है ।

माली की बात को सुनकर फूल ने कहा—सच ! तुम्हारे निमित एव मेरे उपादन ने मेरा रूप निखारा है । यदि मानव भी समन्वय की यह कडी मिलले तो उसका भी जीवन उपवन खिल सकता है ।



आज वक्ताओं मे आचरण कम हो रहा है ।
दीपक तले निरन्तर अधेरा हो रहा है ।
चका चौंध की इस दुनिया मे मानो,
बिना तराजू के ही तोल हो रहा है ।।

(२१)

"कौआ और आदमी"

कौआ की कॉय-कॉय सुनकर आदमी ने कहा कि काग बहुत धूर्त्त और नीच जाती का पक्षी है। नीति मे भी कहा है- "पक्षिणा च वायस" पक्षियो मे कौआ धूर्त होता है। आदमी के मुख से अपने प्रति निन्दा युक्त वचनो को सुनकर काग ने कॉय-कॉय करते हुए कहा—

तुम मेरी निन्दा कर रहे हो, कोई बात नही, लेकिन क्या कभी तुमने अपने लिए भी सोचा है, तुम्हारा स्तर कितना गिरा हुआ है ? मुझे खाने के लिए थोडी-सी भी वस्तु मिल जाएगी तो मैं आवाज लगा-लगाकर अपने सभी सजातीय साथियो को एकत्रित करके फिर सबके साथ खाऊँगा और एक तुम हो जो तुम्हे सबके सामने भी कोई वस्तु मिल जाय तो मनुष्य जाति की बात तो दूर रही अपने भाई को भी एक दाना नही दोगे।

कहा मेरा स्तर और कहा तुम्हारा स्तर ? काग की कडवी सच्चाई को सुनकर आदमी मुह फेरता हुआ चुपचाप चल पडा।



(२२)

"धरती और अम्बर"

अनादि काल से एक दूसरे की ओर झाकने वाले धरती और आकाश ने एक दिन रात्रि की नीरवता मे परस्पर वार्तालाप प्रारम्भ कर दिया ।

धरती ने आकाश से कहा—गगन भैया ! मुझे अनन्त काल हो गया इस प्रकार रहते रहते । मेरी छाती पर कभी पहाड बन गए तो कभी समुद्र बन गए । पहाड के स्थान पर समुद्र बन गए तो समुद्र के स्थान पर पहाड बन गए । श्मशान शहर बन गया और शहर श्मशान बन गया । लेकिन मैंने किसी के साथ भी स्थायी लगाव नही रखा, इसीलिये वे सब तो ढह गए, किन्तु मै तो उसी रूप मे हूं जिस रूप मे पहले थी ।

धरती की बात सुनकर अबर ने कहा—धरती बहिन ! बस-बस तुम्हारी तरह ही मै हूं । मेरे स्थान पर भी बादल बनते है बिजलियां चमकती है, तूफान आते है, लेकिन मै कभी भी उनसे अपना अभिन्न सम्बन्ध नही जोडता हूं, अन्त मे मेरा निर्मल रूप उन सबसे हटकर प्रकट हो ही जाता है ।

आश्चर्य इस बात का है कि धरती-अंबर के अन्दर कैसी भी स्थिति घटित होने पर भी वे अपना स्वरूप नही छोडते है । अत. आज भी वे अपनी उसी शान मे आदमी के सामने खडे है । किन्तु सोचने समझने की शक्ति रखने वाला आदमी जिससे भी जुडता है चाहे माता हो पिता हो, भाई बहिन पत्नी किं वा धन हो बस उसी मै आसक्त बन तन्मय हो जाता है । परिणाम स्वरूप आज तक वह अपनी निजी शक्ति को प्रकट ही नही कर पा रहा है । इधर से उधर सुख की फिराक मे दु ख की गलियो मे भटक रहा है ।



बिना नींव के मकान ढह जाता है,
बिना आधार के पानी बह जाता है ।
अन्तरग की ठोसता नही होगी जब तक,
बिना आधार का उत्थान ढह जाता है ।।

उगता हुआ सूर्य कमल को खिला रहा है,
उल्लू की आखो को अन्धेरा दिखला रहा है ।
महावीर का सदेश भी जन मानस को,
पाप और पुण्य की परिधि बतला रहा है ।।

"दूध और पानी"

एक दिन पानी ने दूध से कहा—वाह ! जनता ने तुम्हारा बहुत अच्छा मूल्यांकन किया है तुम्हारी बहुत कीमत है संसार मे । तुम्हे लोग पैसे से खरीदते है जबकि मुझे यो ही मुफ्त मे ले लेते है । यद्यपि तुम्हारे बिना लोगों का काम चल सकता है, पर मेरे बिना नही । तथापि लोग तुम्हे जितना चाहते है- उतना मुझे नही । कितना अच्छा हो कि मैं भी तुम्हारे जैसा बन जाऊ । दूध ने कहा बहुत अच्छा । अगर तुम मेरे जैसा बनना चाहते हो तो बन सकते हो, लेकिन तुम्हे इसके लिये कठिन साधना करनी होगी ।

पानी ने कहा—अरे तुम जैसा कहो, वैसा करने के लिये तैयार हूँ । बस तुम मुझे अपने जैसा बना लो । तो आ जाओ मेरे मे समाविष्ट हो जाओ । कर दो अपना अस्तित्व विलीन मेरे मे । अपना रूप-रंग-गंध आदि कुछ भी नही रहना चाहिये । दूध ने पानी से कहा ।

पानी ने वही किया । खो दिया अपना अस्तित्व दूध मे तो वह भी दूध की तरह ही मूल्यवान बन गया ।

यदि शिष्य भी अपना अस्तित्व पूर्ण रूप से गुरु चरणों मे विलीन कर दे तो उसका भी गुरुत्व निखर सकता है ।

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

(२४)

"पत्थर और नदी"

नदी मे पानी के थपेडो को खाते-खाते पत्थर को क्रोध आ गया। और वह चिल्लाया कि तुमने तो मुझे साथ मे इसलिये लिया था कि तुम्हे गोल--मटोल करके चमकता हुआ आकर्षक पत्थर बना दूंगा। लेकिन अब जब मैं तुम्हारे चुगल मे फस गया हूँ तो तू मेरी मरम्मत किये जा रही है, यह अच्छा नही है, निकाल दो मुझे बाहर।

नदी ने कल-कल करते हुए बहुत शान्त भाव से कहा अरे तू इतना चिल्लाता क्यो है ? पानी के थपेडे तो पडेंगे ही बस इस थोडे कष्ट को सहन करके फिर देखना तेरा रूप कितना निखरता है ?

आखिर पत्थर ने नदी की बात मानली और थपेडो को सहन करता हुआ नदी मे इधर से उधर लुढकने लगा। लुढकते लुढकते वह एक दिन गोल--मटोल और चमकता हुआ चारु-चिक्कणपूर्ण बन गया, तब नदी ने उसे तट पर उछाल दिया।

लोगो ने देखा और वह उन्हे पसन्द आया कर्मों को थपेडो को भी अगर आदमी इसी प्रकार समभाव के साथ सहन करता जाय तो एक दिन वह भी अपनी समस्त विकृतियों को दूर करके अपना परम स्वरूप उजागर कर सकता है।

"चोर और तिजोरी"

करोड़पति सेठ की तिजोरी मे करोड़ो रुपये भरे रहते थे। तिजोरी उन सब रुपयो की रक्षा करती थी। अपने लिये एक रुपये की बात तो दूर रही, एक दमड़ी भी खर्च नही करती थी।

एक दिन रात्रि को एक चोर सेठजी की हवेली मे घुस गया और सीधा उस नोटो से भरी तिजोरी के पास पहुंच गया, 'चोर ने तिजोरी को खोलने की बहुत कोशिश की' लेकिन जब वह नही खुली तो उसने तिजोरी पर हथौड़े का प्रहार कर दिया।

हथौड़े के प्रहार से तिजोरी खड़खड़ायी और बोली अरे तुम मुझे मार क्यो रहे हो? मैने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? मै तो रुपयो की रक्षा कर रही हूं।

इसीलिये तो मै तुम पर प्रहार कर रहा हूं। क्योकि रुपयो का उपयोग न तुम अपने लिये कर सकती हो न ही दूसरो के लिये। ऐसा कहते हुए चोर ने पूरे जोर से एक और हथौड़े का प्रहार कर तिजोरी को तोड़ ही डाला। जो व्यक्ति सम्पत्ति का न अपने लिये और न ही दूसरो के लिये उपयोग करता है उसकी यही दशा होती है।

| प्रकृति भी मुखर हो उठी

(२६)

"खरगोश और शिकारी"

खरगोश अपनी जान बचाने के लिये बेतहाशा दौडा जा रहा था, जगल की ओर। पीछे-पीछे शिकारी भी दौड रहा था। आखिर नन्हा खरगोश कहा तक दौड पाता। दौडता-दौडता थक गया, सोचने लगा कहा छिपू ? कहा जाऊ ? उसके दिमाग मे एक बात आई और उसने अपनी दोनो आखे बन्द कर ली, सोचने लगा कि मै सुरक्षित हो गया। कोई भी मुझे दिखलाई नही देता, अब मुझे मारने वाला कोई नही है।

उस बिचारे को क्या मालूम कि आखे मैने बन्द की है। शिकारी ने नही। उसे तो सब दिख ही रहा है।

पीछे-पीछे दौडते हुए शिकारी ने उसे पकड लिया और यह बोलते हुए ले जाने लगा कि आखिर ठहरा तो अज्ञानी ही, मै जानता था, कि आखिर तू कहा तक भाग पाएगा, आखे बन्द करके बैठ गया और पकडा गया।

शिकारी की आवाज के साथ पवन चला और वृक्षो से सू-सू की आवाज इस प्रकार निकली—अरे दुष्ट! यह तो अज्ञानी है, इसलिये तुम्हारी पकड मे आ गया। समझदार कहलाने वाला इन्सान तेरी भी यही हालत बनने वाली है। तू भी धन-दौलत परिवार के गुमान मे मृत्यु से बचने के लिये विवेक की आंख बद करके चल रहा है नही मालूम तुझे भी कि मृत्यु देख रही है। वह भी तुझे एक दिन इसी प्रकार पकड कर ले जाएगी। जिस दिन तेरी रक्षा करने वाला कोई नही होगा। ॐ

(२६)

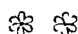
"शेर का मन्तव्य"

एक बार जगल के सभी पशुओं ने एकत्रित होकर यह निर्णय कर लिया, कि हमें सिंह को राजा नहीं मानना चाहिए। हम भी सिंह की तरह ही स्वतन्त्र विचरण करेंगे।

जब सिंह को इस बात का पता चला तो वह बोला— मुझे तुम लोगो कि कोई आवश्यकता नही है। मेरे सेवक के रूप मे तुम रहो या न रहो। उससे मुझ मे कोई अन्तर आने वाला नही है, मैं अपना शिकार स्वय करता हूँ और छोटे से छोटा काम भी स्वय करता हूँ। इसलिए मुझे तुम्हारी आवश्यकता भी नहीं है। मेरी आज्ञा मे रहने से मुझे नही तुम्हे ही लाभ है।

मेरे स्वतन्त्र स्वावलम्बन को कोई नही रोक सकता। मै उस मानव की तरह मूर्ख नही हूँ कि नौकर हो तभी तक वह उसका मालिक है। और नौकर चला जाय तो मालिक पशु बन जाय तो ऐसा मालिक, मालिक नही नौकर है।

जगल के राजा सिंह की बात सुनकर सभी पशु समझ गए और वह पुन सिंह की आज्ञा मे ही रहने लगे।



(३०)

नदी और समुद्र

मधुर कलकल निनाद करती हुई बह रही नदी को देखकर समुद्र उफना—अरे नदी, तू थोडा सा पानी लिये घूमती है और फिर भी इतना अधिक अभिमान का प्रदर्शन कर रही है। देख मेरे पास असीम जलराशि होते हुए भी मैं तेरी तरह छिछला नही हूँ। इसीलिये लोग मेरी गम्भीरता का बखान करते है।

अपनी शैखी बघारते समुद्र को सरिता ने बडे ही स्नेह भाव से कहा—समुद्र दादा! यह सत्य है कि आपके पास अपार जलराशि है और आप मे गभीरता भी है किन्तु यदि आप मे जोरदार ज्वार आ जाय तो सृष्टि का प्रलय हो जाय। आह! अपार जलराशि के होते हुए भी आप म रहा हुआ खारापन लोगो को एक चुल्लू भर पानी भी पीने नही देता।

मेरे पास मे क्यो न थोडा ही पानी हो किन्तु लोग पीकर तृप्त होते है। खेती भी सिंचित होकर धान्य देती है। मेरी आवाज अभिमान को प्रदर्शन नही करती, अपितु लोगो के मन को खुश करती है। नदी की कडवी सच्चाई सुनकर सागर मौन हो गया। बहुत धन सपत्ति भी है पर यदि अभिमान का खारापन है तो वह सपत्ति कोई काम की नही है। थोडी ही सपत्ति क्यो न हो, पर व्यवहार मधुर है तो सभी आकर्षित हो जाते है।

गैस–सिलेण्डर

रसोई घर मे शात बैठी हुई वस्तुए मुखर हो उठी और उनमे परस्पर वार्तालाप होने लगा—

चूल्हे ने कहा—मै दिन भर आग मे तप-तपकर मानवो को गर्म-गर्म भोजन देता हूँ। मेरे तपे बिना मानव को भोजन प्राप्त नही हो सकता।

चूल्हे की बात को सुनकर गैस-सिलेण्डर बोला—तुम तो तपते ही हो लेकिन मै तो मानवो को गर्म भोजन देने के लिए अपनी शक्ति गैस को बराबर खर्च करता हूँ, तभी वे भोजन गर्म कर सकते हैं। मेरे मे इतनी शक्ति है कि अगर विस्फोट कर दू तो यह रसोई तो क्या पूरा घर तबाह हो सकता है।

इन दोनो की बातो को सुनकर चिमटा बीच मे ही खनखना उठा—हा यह सत्य है कि गैस सिलेण्डर यदि विस्फोट कर दे तो पूरा घर भस्म हो सकता है। लेकिन हमे सदा सर्जनात्मक काम करना है। मानव की तरह विध्वसात्मक काम नही। गैस सिलेण्डर सीमा मे रहकर

ही गैस देता है इसलिए उसका महत्व है। वैसे ही मानव भी सदाचार, नैतिकता एव सत्य की सीमा मे चलता है तो ही वह स्व और पर के लिए सर्जनात्मक रूप उपस्थित कर सकता है। अन्यथा कितनी ही सपत्ति, वैभव कमाले किन्तु सुखी नही हो सकता।

चिमटे की इस खन-खनाहट के पीछे उभरे शाश्वत सत्य को सुनकर मानव चौकन्ना जरूर हो गया फिर भी वह आज भी उसी स्थान पर खडा है।



आज भारत मे धर्मो की कोई कमी नही है,
पुरान तथा कुरानो की भी कोई कमी नही है।
दीपक तले अन्धेरा लेकर चलने वाले,
धर्म उपदेष्टाओ की भी कोई कमी नही है॥



राष्ट्र की सुरक्षा शस्त्र निर्माण मे नही होती
शरीर की सुरक्षा अधिक खान पान मे नही होती।
वासना मे सुख समझने वाले लोगो!
जीवन की सुरक्षा भोगविलास मे नही होती॥

(३२)

हीरे का मूल्यांकन

हीरे की चमचमाहट को देखकर हर व्यक्ति का मन उसके प्रति लुभाने लगा। डायमण्ड के बाजार मे बडे-बडे हीरक-पारखी उसका मूल्यांकन करने लगे। कोई उसकी कीमत दस हजार बताने लगा, तो कोई बीस हजार, तो कोई पचास हजार, तो कोई एक लाख। हीरे का मूल्य बढता ही चला गया। हीरा, जौहरियो के एक हाथ मे दूसरे हाथ मे जाने लगा। सभी लोग उसका मूल्याकन कर रहे थे।

हीरा जौहरियो को अपना मूल्याकन करते देख, एक-दम मुखर हो उठा और बोला—मेरे भाईयो! आज मैं अपने आप मे बहुत प्रसन्नता की अनुभूति कर रहा हूँ कि मैं जमीन मे से निकलकर आज इतना योग्य हो गया हूँ, आप सब मेरी बढ-चढकर कीमत कर रहे हैं। लेकिन मुझे इतना सब कुछ पाने के लिए बहुत बडी कुर्बानी करनी पडी है। मुझे जमीन से निकाल कर लोगो ने जगह-जगह मे काटा है, तरासा है, घिसा है, रगडा है। मुझे चमकाने के लिए अनेक तरह के भयकर से भयकर कष्ट दिए है। लेकिन मै

सबको समभाव से सहता गया, परिणाम स्वरूप आज मैं आपके मुंह पर चढ गया हूँ।

क्या ही अच्छा हो कि मेरी कीमत करने के साथ ही जरा आप अपनी भी कीमत कर ले। महान् बनन के लिए केवल मानव शरीर को पा लेना ही पर्याप्त नही है, अपितु जीवन के साथ जुड़े अतिरिक्त तत्वो को काट-छाट कर अलग करना होगा। स्वार्थ, अनैतिकता, हिसात्मक भावनाओ को दूर करना होगा। जीवन को सदाचार, नैतिकता, सत्यता मे चमकाना होगा। विलासी जीवन, कभी भी महान् नही बन सकता।

हीरे की इस आवाज ने जोहरियो को भी अपने आपके लिए सोचने हेतु विवश कर दिया।



जो काट दे एक ही झटके मे उसे तीक्ष्ण
तलवार कहते है,
जो बनाले पर को अपना भी उसे सही
व्यवहार कहते है।
कमल की तरह निर्लेप रहकर दुनिया मे,
जो काट दे कर्म बन्धन को उसे ही शुभ--
विचार कहते हैं॥

गुड मार्निंग ही गुडइवनिंग है

महकते उपवन मे, अरुणोदय की वेला मे विहसता हुआ कमल निरन्तर विकस्वर हो रहा था, तो कुमुदिनी सकुचाती हुई सिकुडती चली जा रही थी ।

एक पुष्प विकस रहा है तो दूसरा फूल सकुचा रहा है । कमल, कुमुदिनी मे नए उल्लास, नई उमग, नए तेज के साथ गुड—मार्निंग कर रहा है तो कुमुदिनी नई प्रसन्नता से गुड इवनिंग कर रही है । महकते उपवन मे प्रवेश करते हुए मानव ने पुष्पो की यह मुखरता देखी तो वह स्तब्ध रह गया और वह सोचने लगा कि एक ही समय मे यह दो बात कैसे ? खिलते हुए कमल ने मानव के मूक प्रश्न को समझा और उसका समाधान दिया—

एक ही समय, एक के लिए प्रात काल है तो दूसरे के लिए सध्याकाल है । क्योकि समय किसी मे जुडा हुआ नही है । जिस समय किसी की मृत्यु हो रही है, उसी समय कोई जन्म ले रहा है । जिस समय कोई धनवान हो रहा है, उसी समय कोई कगाल हो रहा है । एक ही समय मे, जीवन मे असख्य परिवर्तन घटित हो रहे होते है । मानव

इन परिवर्तनो मे ही जीने और मरने लगता है । इससे वह अपने आप को अलग नही हटा पाता, इसलिए वह गुड-मॉर्निग के समय ही गुड-इवनिग नही कर सकता । यही कारण है कि वह क्षण भर मे सुखी और क्षण भर मे दुखी हो जाता है ।

लेकिन हम सदा अपने स्वभाव से कभी च्युत नही होते है । अत. हमारे लिए एक ही समय, दो रूपो मे विभक्त हो जाता है । कमल की यह आवाज, सुवास के रूप मे मानव के नासारन्ध्रो मे प्रवेश करती हुई उसे कुछ क्षण के लिये सहज सुख का आभास करा उठी ।



हृदय की शोभा हार से होती है,
घर की शोभा परिवार मे होती है ।
परन्तु जीवन की शोभा तो, गुरुवर
तुम्हारे ही दृढ आधार से होती है ॥

लौ को जलने के लिये दीपक का सहारा चाहिये,
मीन को तिरने के लिये पानी का सहारा चाहिये ।
जीवन नैया को पार करने के लिये मुझको,
हे नरपुगव नानेश पूज्यवर ! तुम्हारा सहारा चाहिये ॥

गुड मार्निंग ही गुडइवर्निंग है

महकते उपवन मे, अरुणोदय की वेला मे विहसता हुआ कमल निरन्तर विकस्वर हो रहा था, तो कुमुदिनी सकुचाती हुई सिकुडती चली जा रही थी।

एक पुष्प विकस रहा है तो दूसरा फूल सकुचा रहा है। कमल, कुमुदिनी से नए उल्लास, नई उमग, नए तेज के साथ गुड—मार्निंग कर रहा है तो कुमुदिनी नई प्रसन्नता से गुड इवर्निंग कर रही है। महकते उपवन मे प्रवेश करते हुए मानव ने पुष्पो की यह मुखरता देखी तो वह स्तब्ध रह गया और वह सोचने लगा कि एक ही समय मे यह दो बात कैसे ? खिलते हुए कमल ने मानव के मूक प्रश्न को समझा और उसका समाधान दिया—

एक ही समय, एक के लिए प्रात काल है तो दूसरे के लिए मध्याकाल है। क्योकि समय किसी से जुडा हुआ नही है। जिस समय किसी की मृत्यु हो रही है, उसी समय कोई जन्म ले रहा है। जिस समय कोई धनवान हो रहा है, उसी समय कोई कगाल हो रहा है। एक ही समय मे, जीवन मे असख्य परिवर्तन घटित हो रहे होते है। मानव

इन परिवर्तनो मे ही जीने और मरने लगता है। इससे वह अपने आप को अलग नही हटा पाता, इसलिए वह गुड-मॉनिग के समय ही गुड-इवनिग नही कर सकता। यही कारण है कि वह क्षण भर मे सुखी और क्षण भर मे दुखी हो जाता है।

लेकिन हम सदा अपने स्वभाव से कभी च्युत नही होते है। अत. हमारे लिए एक ही समय, दो रूपो मे विभक्त हो जाता है। कमल की यह आवाज, सुवास के रूप ने मानव के नासारन्ध्रो मे प्रवेश करती हुई उसे कुछ क्षण के लिये सहज सुख का आभास करा उठी।



हृदय की शोभा हार से होती है,
घर की शोभा परिवार से होती है।
परन्तु जीवन की शोभा तो, गुरुवर
तुम्हारे ही दृढ आधार से होती है ॥

लौ को जलने के लिये दीपक का सहारा चाहिये,
मीन को तिरने के लिये पानी का सहारा चाहिये।
जीवन नैया को पार करने के लिये मुझको,
हे नरपु गव नानेश पूज्यवर ! तुम्हारा सहारा चाहिये ॥

(३४)

हाथी और कुत्ता

हाथी अपनी मस्त चाल से चला जा रहा था। उसका ध्यान किसी की तरफ नही था। वह अपनी धुन मे ही मस्त था। पर तुच्छ प्राणी कुत्ते से यह सहा नही गया। वह सोचने लगा—यह भीमकाय प्राणी कहा से आ गया और फिर मेरी गली मे बडी मस्ती से चला आ रहा है। इसे जल्द यहा से भगाना चाहिए। नही तो यह मेरी गली [illegible]

देखते हुए देखकर कुत्ते दुम उठा कर भाग उठे । हाथी ने देखा–रे, जो मेरे देखने मात्र से भाग जाते है, वे मच्छर मेरा क्या बिगाडेगे । बस हाथी उनकी बातो का कुछ भी प्रतिकार न कर अपनी चाल से चलता रहा । कुत्ते फिर भौकने लगे । अब तो हाथी ने आख उठाकर भी नही देखा कुत्ते केवल भौकते, पर पास मे नही आ सके । हाथी पर उनके भौकने का अब कुछ भी असर नही हुआ ।

सच है समझदार व्यक्ति, महान् पुरुष कभी भी तुच्छ व्यक्तियो की अनर्गल बकवास का जबाब नही देते ।



खाना खाना सरल है, पचाना है मुश्किल,
धन चाहना सरल है, कमाना है मुश्किल ।
दीक्षित होना सरल है, निभाना है मुश्किल,
ज्ञान पाना सरल है, टिकाना है मुश्किल ।।



बोलना सरल है, सुनना है मुश्किल,
तोडना सरल है जोडना है मुश्किल ।
चौरासी लाख योनियो मे आत्मा को,
घुमाना सरल है, खोजना है मुश्किल ।।

नासमझ कौन ?

हाण्डी में फंसे हाथ को निकालने में असमर्थ बन्दर चीऊ-चीऊ करने लगा।

हुआ यों कि मटकी में चने पड़े हुए थे। जिसे देखकर बन्दर के मुंह में पानी आ गया और वह उन्हें खाने के लिए ललक उठा। कूदता-फांदता पहुंचा वहां पर और मटकी में हाथ डालकर चनों से मुट्ठी भर ली। किन्तु मटकी का मुंह छोटा होने से हाथ वापिस नहीं निकल रहा था।

नासमझ हू, इसलिए फस गया हू, पर तुम तो समझदार हो। आश्चर्य ता यह है कि तुम्हारा हाथ ही धन दौलत ऐश्वर्य को पान के लिए जकडा हुआ है। तुम अधिक से अधिक दोलत पाने के लिए अपने पूरे जीवन को दुःख के ससार मे जकडते जा रहे हो। बताओ आज तक भी किसी ने दौलत की पकड–जकड से सुख पाया है? सच्चाई मे तो उत्तर यही होगा–नही। जब तुम इतने समझदार होकर के भी उसे नही छोड सकते हा तो तुम ज्यादा नासमझ हो या मै ?

यह कहने के साथ ही बन्दर ने एक झटका मारा–मटकी फूट गई और वह चने लेकर भाग गया।

बन्दर के द्वारा यह कटु सत्य को सुनकर दुनिया के श्रेष्ठ प्राणी मानव का मस्तक झुक गया।

❀

तिल का ताड बना सकता है आदमी,
बात का बतगड बना सकता है आदमी।
प्राणियो मे श्रेष्ठ बनता है, पर
फूल को भी काटा बना सकता है आदमी ॥

❀❀
❀❀

आकाश सभी का एक समान आधार होता है,
सर्वज्ञो के ज्ञान का एक समान विस्तार होता है।
शिष्य अविनीत हो या विनीत,
सुगुरु का तो एक समान व्यवहार होता है ॥

चातक शिशु का निश्चय

सूर्य अपने तीव्र तेज के साथ भूमि को संतप्त कर रहा था। वन्य जगत् के प्राय. समस्त पक्षी प्यास को शांत करने के लिये बार-बार सरोवर की ओर उड़ान भर रहे थे। किन्तु आश्चर्य! चातक इतने दिनों से, महीनों से प्यासा रहकर भी सरोवर की ओर उड़ान भरने का रुख भी नहीं कर रहा था।

अन्यथा मर जाऊगा। तुम्हारा यह निश्चय जरूर रग लाएगा। बादल बरसेगे और तुम्हारी प्यास बुझेगी।

बच्चे को मा के वचनो से जोश आ गया और सब तरफ से आशाए छोडकर, आकाश की तरफ ही टकटकी लगाए स्थिर हो गया। उसके निश्चय ने चमत्कार कर दिखाया और रिमझिम-रिमझिम करता पानी आया।

चातकी की तरह ही आदमी भी सभी ओर से सम्बन्धो को तोडकर मन - वचन - काया से प्रभु की भक्ति मे तल्लीन हो जाता है तो उसमे भी परमात्म स्वरूप उभर आता आता है। क्या हम चातक जैसे पक्षी से शिक्षा नही लेगे?

ॐ

महान् वह नही होता जो अपने ही स्वार्थ मे गिरा रहता है,
विद्वान् वह नही होता जो उन्माद मे ही भरा रहता है।
धवल कीर्ति का विस्तार यो ही नही होता पुरुषो,
धनवान वह नही होता जो मात्र स्वार्थ मे ही धरा रहता है ॥

ॐ

आज नए-नए साहित्यो की भरमार है,
आज नए-नए विचारो का उभार है।
आचार और व्यवहार के तम्बू उखडते जा रहे है,
आज नए-नए परिवर्तनो का ही विस्तार है ॥

आदमी खुश हो गया। वाह अब तो तोता समझ गया है अब कुत्ते बिल्ली इसे मार नही सकते। यही सोचकर तोते को आदमी ने तोते को पिंजरे से बाहर निकाल दिया। तोता केवल रटना ही जानता था। उसे समझ नही थी जैसे मालिक ने समझाया वैसा उसने रट तो लिया पर समझा नही कि कुत्ते बिल्ली क्या होते है। इस ना समझी के कारण बिल्ली ने तोते को आ दबोचा और वह उड नही सका। ची ची करता रह गया। यह देखकर उसका मालिक दौडा-दौडा आया और चिल्लाया—अरे नादान! तुम्हे इतना समझाया था। फिर भी तुम बिल्ली मे नही बच सके। आखिर तो पक्षी ही हो। मानव की भाषा जरूर सीख गये पर दिमाग नही आया तुम्हारे मे मूर्ख ही रह गए।

इन्सान को गुस्सा करते देखकर तोता बोला--समझदार इन्सान! यह सही है कि मेरे मे दिमाग नही है, पर तुम्हारे मे तो दिमाग है ना। तुम्हे ऋषि महर्षि त्यागी महात्मा प्रतिदिन समझाते है कि इन सासारिक वस्तुओ मे सुख नही है, सुखाभास है। और उनके सामने हॉ भी भरते हो कि आपकी बात सत्य है। पर आज भी वही कार्य कर रहे हैं। जो पहले करते थे। बोलो—मूर्ख तुम हो या मैं हूँ?



(५६)

चिड़िया का सन्देश

एक नन्ही सी चिड़िया वृक्ष मूल के खोखर के किनारे अपने रहने के लिए जाल बनाने का प्रयास करने लगी। बड़ी मुश्किल से तिनका लाकर वह वहां लगाती और तिनका गिर पड़ता। वह फिर से नीचे जाती तिनका लेकर आती और फिर वहां आकर लगाती। और वह फिर पड़ता ऐसा एक बार-दो बार नहीं अनेक बार हो गया। फिर भी चिड़िया ने पुरुषार्थ नहीं छोड़ा वह तिनका बार-बार लाकर वहां लगाने का प्रयास करती रही।

मकड़ी के परिश्रम को इस प्रकार निरर्थक जाते देखकर आदमी ने कहा—अरे बेजान चिड़िया! क्या बार-बार तिनका उठा रही है। तेरे से तिनका लगना तो है नहीं। तेरा परिश्रम बेकार जा रहा है।

आदमी की इस बात को सुनकर के भी चिड़िया ने अपना परिश्रम करना नहीं छोड़ा। वह उसी लगन निष्ठा से साथ परिश्रम करती रही। आखिर उसके परिश्रम ने [illegible] कर दिखाया। तिनका उस आकार में जा टिका।

| प्रकृति भी मुखर हो उठी

फिर क्या था चिडिया एक के बाद एक तिनका लगाती चली गई। और अपने लिये एक घोसला तैयार कर ही लिया।

घूमता-घामता आदमी फिर से उसी वृक्ष की छाव मे आकर बैठ गया। सृष्टि के श्रेष्ठ प्राणी आदमी आया देखकर चिडिया ने उसे सूचित किया तुमने तो कहा था न कि मै बेकार परिश्रम कर रही हूँ। पर लो देखो—मैने अपना घोसला तैयार कर लिया है। और आराम से रह रही हूँ। और एक तुम हो जो समझदार कहलाते हो। सब कुछ करने मे समर्थ कहते हुये भी भूखे मर रहे हो। खाने के लिए भोजन की पूरी सामग्री ही नही जुटा पा रहे हो।

चिडिया के इस सदेश ने आदमी का मुह बद कर दिया।



दुर्गम पथ पर चलने का अभ्यासी बन गया
है आदमी,
विकट विपत्तियो को सहने का अभ्यासी बन गया
है आदमी।
पर मानव शक्ति विपरीतगामी अधिक बनी है,
सघर्षो से जूझने का अभ्यासी बन गया है आदमी॥

(५७)

"गिलहरी का अथक परिश्रम"

सृष्टि का एक प्राणी इन्सान अथक परिश्रम करके भी जिन्दगी मे सफल नही हो सका। विवाह किया सुख पाने के लिए तो पत्नी कर्कशा मिल गई। व्यापार किया धन पाने के लिये तो प्रॉफिट के स्थान लॉस हो गया। जो भी काम किया उसमे हानि ही हानि होती चली गई। आखिर इन्सान अपनी जिन्दगी से ऊब गया। वह जहा भी चला जाता उसे दुख ही दुख प्राप्त होता। ऐसे जिन्दगी जीने के बजाय तो मरना अच्छा। यही सोच कर वह निकल पड़ा, अपने घर से जगल की ओर। चलता ही गया चलता ही गया। बहुत दूर निकल आया। घन जगल को पार करने के बाद उसे एक झरना दिखलाई दिया। थका मदा इन्सान उस झरने के पास जा पहुचा। प्यास तो तेजी से लग रही थी। इसलिये सबसे पहले उसने झरने का शीतल सुमधुर जल पीकर अपनी प्यास शान्त की। उसके बाद शीतल-वृक्ष छाव मे बैठ गया और प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन करने लगा।

इसी अवलोकन मे उसने एक विचित्र बात देखी। वह

यह थी कि एक नन्ही-सी गिलहरी जो झरने के पास जाती और अपनी पूछ गीली करके स्थल–भू भाग मे आकर उसे सूखो देती। फिर झरने के पास जाती और गिली पूछ करके स्थल भू भाग मे आकर फिर सुखा देती। उसका यह क्रम निरन्तर चल रहा था गिलहरी की यह स्थिति देखकर उस आदमी से रहा नही गया। वह बोला ए' नन्ही-सी दुबली जान! यह क्या कर रही हो। क्यो बार-२ झरने मे जाकर पूछ गीली करके सुखा रही हो। क्या कारण है, इस प्रकार करने का ?

आदमी की आवाज सुनकर गिलहरी के पाव ठिठक गए और उसने आदमी को घूरा और बोली–इन्सान! तुझे क्या मतलब मैं क्या कर रही हू। तुम अपना काम करो। मेरे काम मे हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नही है।

गिलहरी की आवाज सुनकर इन्सान ने कहा—अरी मैं तुम्हारे कहा बाधा डाल रहा हू ? मैं तो केवल यह पूछ रहा हू कि तुम यहा क्या कर रही हो ?

गिलहरी—क्या तुमको दिख नही रहा है। मैं झरने का पानी अपनी पूछ मे बार २ लेकर बाहर ला रही। यह झरना सुखाना है। इसका सारा पानी खाली करना है!

नन्ही-सी चुहिया के पहाड खोदने की तरह गिलहरी को निरर्थक परिश्रम करते देखकर मानव ने अट्टहास करते हुए कहा–वाह धन्य है तुम्हारा परिश्रम।

तुम तो क्या तुम्हारी सात पीढिया भी इसी तरह करती-२ खप जाए तो भी यह झरना सूख नही सकता।

गिलहरी—नादान इन्सान! तुम मेरी तरफ क्यो देखते

हो। मैंने तो अपना लक्ष्य पुरुषार्थ बनाया है। फल की तरफ कभी ध्यान ही नहीं दिया। इसलिये मैं तो अपना परिश्रम करती रहूंगी। भले झरना सूखे या न सूखे। इसमें मुझे कोई मतलब नहीं है।

गिलहरी की इस अदम्य साहस भरी बात ने इन्सान को अपने विषय में सोचने के लिये विवश कर दिया। कहां तो यह गिलहरी जिसके सामने पहाड़ जितना काम पड़ा है तो भी नहीं घबरा रही है और कहां मैं जो थोड़े से परिश्रम से सफलता न पाकर मैदान छोड़कर भाग खड़ा हुआ हूं। अतः मैं गिलहरी से भी गया गुजरा हूं। नहीं-नहीं मुझे ऐसा नहीं करना चाहिये। मैं भी गिलहरी की तरह अदम्य साहस एवं उत्साह के साथ काम करूंगा तो एक न एक दिन सफलता पाकर रहूंगा।

हिम्मत हारे उस इन्सान ने नन्ही-सी गिलहरी से प्रेरणा लेकर अपने विचार बदल दिये और उत्साह एवं लगन के साथ अपने कार्य में जुट गया।

नन्ही-सी गिलहरी ने [illegible] रहे इन्सान को बचा लिया।

(५८)

मूषक का स्वार्थ

इधर से उधर फुदकते हुए मूषक--चूहे को एक दिन धान्य का अक्षय भण्डार दिखाई दे गया। एक कोठे में गेहू ही गेहू भरे हुए थे। जिसे देखकर मूषक बहुत खुश हुआ। और सोचने लगा 'वाह' यह अनाज मेरे हाथ लग जाय तो जिन्दगी भर खाऊ तो भी समाप्त होने वाला नही है। पर इस कोठे मे जाया कैसे जाय ? इसका--मुख्य द्वार तो बद है मूषक ने कोठे के चारो ओर दौड लगाई और वह उसका सूक्ष्मता से निरीक्षण करने लगा कि कहा छिद्र है ? देखते-देखते आखिर उसे एक सुराख--छिद्र मिल ही गया। हालांकि वह था तो बहुत छोटा ही पर लोभ के वश होकर नादान मूषक अपने शरीर को सिकोड कर उस सुराख मे भीतर प्रविष्ट हो ही गया।

अब क्या था ? उसकी आखो के सामने धान्य का अखूट भडार था। जिसे पाकर मूषक सोचने लगा। जितना अनाज मेरे पास है, उतना मेरे किसी भी साथी के पास नही होगा दुनिया मे मेरे से ज्यादा धनवान कौन होगा ? अब तो मेरी जिन्दगी बहुत शान्ति से गुजरेगी। भोजन के लिये इधर-उधर भटकना नही पडेगा। बिल्ली का भी डर

नही है। क्योंकि वह भीतर प्रवेश ही नही कर सकती। यहा तो बस मेरा ही एकाधिकार राज्य है। कुछ समय तक तो वहा मन की कल्पनाओ मे ही उडता रहा। इसके बाद अनाज खाने लगा जब भी भूख लगती पेट भर खाता। दो चार दिन तक तो उसे बडी प्रसन्नता की अनुभूति हुई। पर आखिर पूरे कोटे मे अकेला होने से कब तक उसका मन लगता। अब उसे अपने भाई दूसरे चूहो की याद आने लगी। सोचा जाऊ वहा पर और उन्है भी बताऊ कि मेरे पास कितना बडा अनाज का भण्डार है। दिन भर अकेले-२ ता दिन कट ही नही पा रहा है। यह सोच कर मूषक-राज अपनी शेखी बघारने, कोठे मे बार निकलने के लिए उस सुराख के पास पहुचे। सुराख तो पहले से ही छोटा था। तब भी जैसे-तैसे मूषक राज ने भीतर प्रवेश किया था। और अब तो पेट भर अनाज खाने से मूषकराज का शरीर भी तन गया था। अत सुराख बहुत ही छोटा पडने लगा। मूषक-राज से निकलना नही हो पा रहा था। यह देख कर तो मूषकराज बहुत घबराये। अब तो कैसे भी वहा से निकलने की कोशिश करने लगे। उन्हे अकेलापन बहुत अखरने लगा। पर कोशिश करने पर भी निकल नही पा रहे थे। आखिर मूषकराज ने झटके के साथ निकलने को पूरी—कोशिश की तो उस छिद्र मे ही फस गए। विचित्र दशा बन गई उनकी न बाहर जा पाए और न भीतर ही। मूषकराज [illegible] लगे। पर अब उन्हे बचाने वाला कौन था ? आखिर [illegible] ने आकर मूषकराज ने वही तडफ-२ कर अपने प्राण छोड दिये।

कुछ दिनो के बाद इन्सान ने आकर जब कोठा खोला

ही ठहरा । खा-पीकर मुस्टंड तो हो गया और जब वह भागने लगा तो इसमें फंस गया ।

चूहे के लिए इस प्रकार के शब्द सुनकर प्रकृति भी मुखर हो उठी । ए सृष्टि के श्रेष्ठ प्राणी यह ना सोचना कि चूहा मूर्ख है ! पर तुम यह क्या कर रहे हो । तुम भी अपने ही स्वार्थ के वश होकर धन के, चन्द चाँदी के टुकड़ों से भण्डार को भरने में लगे हुए हो । क्या तुम्हें मालूम नहीं कि तुम भी इसी प्रकार उसमें अपने प्राण गवां बैठोगे । चूहा तो नादान था पर तुम तो समझदार हो ना !



(५९)

कुत्ते की आदत

कुत्ते अपने स्वामी के प्रति बहुत वफादार होते हैं। चोरों से अपने स्वामी की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कुत्ता, आदमी के साथ या फिर अन्य किसी के साथ बड़े स्नेह से रह सकता है पर अपने जातीय भाई [illegible] कुत्ते के साथ नहीं। एक बार एक गली का कुत्ता, भटकता हुआ दूसरी गली में चला गया। उस गली के कुत्तों ने जब उसे देखा तो स्वागत करने की बजाय, [illegible] लगे। सभी कुत्तों ने आकर उसे चारों तरफ से घेर लिया और भौं-भौं करके उसे कचोटने लगे। बिचारा अकेला कुत्ता उन सबके सामने कहां तक टिकता, आखिर अपनी जान बचाने के लिये वहां से भाग निकला और चलता-

उसे वहा से वह नही निकाल देता है, तव तक शान्ति से नही बैठता है।

कुत्ता ने पोथी के पण्डित से जब सपने लिए प्रतिक्रिया सुनी तो बोला—पडितराज! बात तो आपकी सच्ची है। हमारे मे यह दुर्गुण निश्चित रूप से है। हम अपने ही भाई को देखना पसन्द नही करते। वसे भी हम नासमझ है, पर आप ना दुनिया के श्रेष्ठ प्राणी हो और उसमे भी पडित हो। आपने तो बहुत पढाई की है। हमको तो पढना भी नही आता है, पर हमने देखा है कि आप भी जब किसी दूसरे पडित को देखते हो तो हमारी तरह ही घुर्राते है। हम तो हमारे सामने कुत्ता आने पर ही घुर्राते है। सामने न हो तो हम उनके विषय मे दूसरो के सामने कुछ नही कहते है। पर आप तो आपके सामने दूसरा पडित आए या न आए, उसके परोक्ष मे भी उस पडित की बात चलेगी तो घुर-घुराए बिना नही रहोगे, और आपकी घुर्राहट भी बहुत तेज होती है।

अब बोलिये पडितराज! जब आपकी भी यही स्थिति है तो फिर हमारे मे और आप मे अन्तर ही क्या रहा है? पहले आप अपने दुर्गुण को निकालिये फिर हमको कुछ शिक्षा दे तो उपयोगी रहेगा। अन्यथा आपकी शिक्षा का हम पर कोई असर नही होने वाला है।

कुत्ते की इस आवाज को सुनकर पडितजी का मस्तक शर्म से नीचे झुक गया। चले थे अपनी पडिताई बघारने के लिये पर अब मुह बिगाड कर वहा से चल पडे।

इसीलिये नीतिकार ने सही कहा है—पण्डितो पण्डितं दृष्ट्वा श्वानवत् घुर्घुरायते। ❀

(२५)

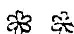
"चोर और तिजोरी"

एक कुत्ते को कहीं से एक रोटी प्राप्त हो गई। अभी उसे भूख नहीं थी इसलिए उसने सोचा—यह रोटी कहीं गाड़ दी जाय। जब भूख लगेगी तब निकालकर खा लूंगा। कुत्ता उस रोटी को गाड़ने चल पड़ा, पर रास्ते में पानी का नाला आ गया, उसे पार करना था। अब वह पानी में ही चलने लगा। पानी में चलते-चलते उसकी दृष्टि नीचे की ओर पड़ी तो उसने देखा कि उसकी तरह ही एक और कुत्ता भी रोटी लेकर भाग रहा है। यह देखकर वह सोचने लगा—क्यों न इस कुत्ते की रोटी भी छीन ली जाय, ताकि मेरे पास दो रोटियां हो जाएंगी। यह सोचकर नासमझ कुत्ते ने अपने साथ चल रहे कुत्ते से रोटी छीनने के लिए मुंह खोला और भौंकना चालू किया।

तुझे यह भी मालूम नही कि जो कुत्ता तुम्हारे साथ मे चल रहा था, वह वास्तव मे कुत्ता नही था, किन्तु तुम्हारी ही परछाई थी, जिसे तूने कुत्ता समझकर उसकी रोटी छीनने की कोशिश की तो अपनी रोटी भी गवा वैठा । अपने भाई की रोटी जो छीनेगा, उसका यही हाल होगा । इसीलिए मानवो मे भी जो नासमझी का काम करता है, उसे कुत्ते की उपमा दी जाती है ।

इन्सान की बात सुनकर गुस्से मे आया कुत्ता भोकने लगा । अरे समझदार कहलाने वाले इन्सान ! तुम मुझे वदनाम कर रहे हो, पर जरा अपने गिरेबान मे भी झाक-कर देखो – तुम्हारा क्या हाल है ? चद चादी के टुकडो को लेकर क्या तुम नही भाग रहे हो ? अपने ही भाई का धन छीनने के लिए तुम सव कुछ करने के लिए तैयार हो जाते हो । अपनी सारी जिन्दगी को धन वटोरने मे ही बर्बाद कर रहे हो । एक दिन वह समय आ जाता है, जव इसी भाग दौड मे तुम्हारी आयु समाप्त हो जाती है । और तुम सव कुछ छोडकर यहा से चले जाते हो । अपने स्वार्थ के पीछे भाई के साथ जितनी गद्दारी तुम कर सकते हो उतनी मैं तो क्या दुनिया का कोई भी प्राणी नही करता ।

सच कहूँ तो तुम्हारे स्वार्थ की परछाई मेरे ऊपर गिर जाने से ही मै स्वार्थी वन गया हूँ । सभव है अगर तुम्हारा साथ नही होता तो मेरा यह स्वभाव नही होता । इसी आवाज के साथ कुत्ता वहुत तेजी से भोकता हुआ आदमी की ओर लपका । यह देखकर आदमी ने देखा कही यह मुझे काट न ले यह सोच वहा से भाग खडा हुआ ।



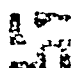
(६१)

हवा और बादल का संघर्ष

[illegible] का मौसम, गर्मी भयंकर गिर रही थी। सभी [illegible] आकाश की ओर लगी हुई थी। प्यासा चातक [illegible] तरस रहा था, किसान बीज बोने के लिए [illegible] में इन्तजार कर रहा था। आखिर सभी [illegible] आशाओं को पूर्ण करने के लिए नभ में काले कजराले [illegible]।

आदमी की स्वार्थ बुद्धि ने बादल को गिराने की तरकीब निकाल ही ली। उसने हवा को समझाया - देखो, बादल जब तक घनीभूत रहेगा तब तक तो इसे गिराया नही जा सकता है, हा यदि इसकी शक्ति विखडित कर दी जाय तो इसे नीचे गिराया जा सकता है। इसके लिए तुझे यह काम करना है कि तुम बहुत तेजी से चलो। जितनी तेजी से चलोगी उतनी ही बादल की शक्ति शिथिल होती चली जाएगी और वह बिखर जाएगा, बिखरने पर वह आकाश मे टिक नही सकता। हवा ने मानव की बात सुनकर वैसा ही किया। हवा के थपेडो से बादल बिखर गए और कुछ ही क्षणो मे धरती पर आ गए।

आदमी की स्वार्थ बुद्धि दूसरे को ऊपर उठने नही देना चाहती।



विना आवरण के आकर्षण नही होता,
विना सुशासक के सचालन नही होता।
कर्म की विचित्रता को समझो उपासको,
विना कर्मो के जन्म-मरण नही होता॥

आम्र भी कभी-कभी मारक बन जाता है,
किपाक भी कभी-कभी तारक बन जाता है।
शत्रु मित्र की परिधियो को समझो भाइयो,
मित्र भी कभी-कभी सहारक बन जाता है॥

(६१)

हवा और बादल का संघर्ष

आषाढ का मौसम, गर्मी भयकर गिर रही थी। सभी की दृष्टि आकाश की ओर लगी हुई थी। प्यासा चातक पानी के लिये तरस रहा था, किसान बीज बोने के लिए वर्षा का बेताबी से इन्तजार कर रहा था। आखिर सभी की आशाओ को पूर्ण करने के लिए नभ मे काले कजराले बादल मडरा गए।

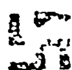
बादलो का नभ मे एक छत्र राज्य देखकर हवा से रहा नही गया, उसने सोचा--इन्हे कैसे भूमिसात् किया जाय? ऐसे तो ये घनीभूत है, अत शक्ति सपन्न है, ऐसी स्थिति मे इन्हे नीचे नही गिराया जा सकता है? फिर क्या किया जाय?

हवा ने सोचा—सृष्टि के सभी प्राणियो मे सर्वश्रेष्ठ बुद्धिमान तो आदमी है, क्यो न आदमी से ही पूछा जाय कि बादल को आकाश से कैसे नीचे गिराया जाय? यही सोचकर हवा आदमी के पास पहुची और अपनी समस्या सामने रखकर उसने समाधान मॉगा।

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

आदमी की स्वार्थ बुद्धि ने वादल को गिराने की तरकीब निकाल ही ली। उसने हवा को समझाया - देखो, बादल जब तक घनीभूत रहेगा तब तक तो इसे गिराया नही जा सकता है, हा यदि इसकी शक्ति विखडित कर दी जाय तो इसे नीचे गिराया जा सकता है। इसके लिए तुझे यह काम करना है कि तुम बहुत तेजी से चलो। जितनी तेजी से चलोगी उतनी ही वादल की शक्ति शिथिल होती चली जाएगी और वह विखर जाएगा, विखरने पर वह आकाश मे टिक नही सकता। हवा ने मानव की बात सुनकर वैसा ही किया। हवा के थपेडो से बादल बिखर गए और कुछ ही क्षणो मे धरती पर आ गए।

आदमी की स्वार्थ बुद्धि दूसरे को ऊपर उठने नही देना चाहती।



विना आवरण के आकर्षण नही होता,
विना सुशासक के सचालन नही होता।
कर्म की विचित्रता को समझो उपासको,
बिना कर्मो के जन्म-मरण नही होता॥

आम्र भी कभी-कभी मारक बन जाता है,
किपाक भी कभी-कभी तारक बन जाता है।
शत्रु मित्र की परिधियो को समझो भाइयो,
मित्र भी कभी-कभी सहारक बन जाता है॥

(६२)

चन्दन वृक्ष और सर्प

चन्दन की भीनी-भीनी महक से पूरा उपवन महक उठा। पशु-पक्षी भी पुलकित हो उठे। सर्प तो उस सुगन्ध से इतना अधिक मोहित हुआ कि वह सब कुछ छोडकर चन्दन के तने मे आकर लिपट गया और चन्दन की शीतलता एव सुगन्ध मे आसक्त बन गया। सर्प को अपने तने मे लिपटते देखकर चन्दन वृक्ष को एक बार तो विचार आया—अरे यह जहरीला जन्तु! मेरे क्यो लिपट गया? इसकी तो जहरीली नि श्वास भी घातक है और यदि जहर उगल दे तो विनाश निश्चित ही है।

एक बारगी तो चन्दन तो चिन्तित हो गया पर दूसरे ही क्षण सोचा—ठीक है सर्प जहरीला है तो रहने दो। पर मै इसका जहर अपने मे ग्रहण नही करूगा तो मुझे कोई हानि नही हो सकती। यह मेरे तने से लिपट रहा है, लिपटने दो। भले बाहर से यह मेरे चिपका हुआ दृष्टिगोचर हो पर भीतर से मेरी और इसकी दूरी सदा बनी रहेगी। चन्दन के वृक्ष ने यही किया, कभी भी उसके जहर को अपने भीतर प्रविष्ट नही होने दिया। एक बार आदमी

घूमता-घामता उसी उपवन आ पहुँचा। चन्दन की भीनी-भीनी सुगन्ध से आकर्षित हो वह सीधा चन्दन वृक्ष के पास पहुच गया पर सर्प को चन्दन के वृक्ष से लिपटा देखकर ठिठक गया। और फिर सर्प को हटाने की योजना बनाने लगा।

आदमी को आया देखकर सर्प ने चन्दन वृक्ष से कहा—अरे! मानव आया है मानव! पर यह क्या? यह ठिठक क्यो गया? इसे तो आगे आना चाहिये था। क्या यह तुमसे डरता है?

तब चन्दन वृक्ष बोला—नही-नही। वह मुझसे नही तुम से डरता है। तुम जो मेरे से लिपटे हो, इसी से वह ठिठक गया है और तुम्हे हटाने की योजना बना रहा है।

सर्प बोला—पर वह मेरे से क्यो डरता है? मै भी तो तुम्हारे साथ हूँ।

चन्दन वृक्ष बोला—तुम भले बाहर से मेरे साथ हो पर भीतर से मेरे मे अलग हो। तुम मे जहर भरा है, जब तक तुम्हारे अन्तरग की जहरीली ग्रन्थि नही निकलेगी, तब तक तुम मे लोग दूर ही रहेगे।

इधर आदमी ने सर्प को हटाने के लिए पुंगी की सुरीली आवाज छेड ही दी। पूरा उपवन सुरीली आवाज ने झनझना उठा। इतनी देर तक तो सर्प चन्दन वृक्ष से बात कर रहा था, पर ज्यो ही उसके कान मे पुंगी की आवाज पडी, त्यो ही वह अपना भान भूल गया और चंदन

वृक्ष को छोडकर पुगी के सामने नाचने लगा। बुद्धिमान इन्सान ने भान भूले सर्प का दमन कर ही दिया और चदन वृक्ष को भी अपने काम मे ले लिया।

जो व्यक्ति सज्जन पुरुष के साथ रहकर भी अपने अन्तरग से दुर्जनता नही छोडता है, वह भले बाह्य परिवेश मे सुन्दर कितना भी क्यो न नजर आए उसे कोई नही चाहता।

जो अपना भान भूल जाता है, स्व को छोडकर पर मे रमण करता है, उसका हाल सर्प की तरह ही होता है।



दीपक सहायक है, तमिस्र निशा मे,
मित्र सहायक है, विपन्न दशा मे।
अभीष्ट सिद्धि के लिए साधको,
ज्ञान सहायक है, आत्म दिशा मे॥

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

(६३)

एलेक्शन सौरमण्डल का

धरती पर (एलेक्शन) मतदान को देखकर एक बार आकाश-मण्डल मे रहने वाले गृह, नक्षत्र और तारा सभी सोचने लगे—अपने यहा भी एलेक्शन होना चाहिए। हमे भी स्वतन्त्र रूप से वोट देने का अधिकार मिलना चाहिए। आखिर सौरमण्डल मे इस बात की सरगर्मी से चर्चा होने लगी। इतने दिनो तक तो सूर्य, अपनी मनमानी करता था। बस, सर्वत्र अपनी ही धाक जमाने मे तुला था। दुनिया मे बस उसी की ही प्रतिष्ठा रहे, यही वह चाहता था। अपने अभ्युदय मे सबको तेजोहीन बनाए हुए था। अन्य ग्रह-नक्षत्रो को अपने रौब से दबाता रहता था, पर जब सभी ने मिलकर एलेक्शन की बात उठाई तो सूर्य भी विचार मे पड गया। आखिर विवश होकर उसे एलेक्शन की घोषणा करनी ही पडी।

वैसे पार्टिया तो बहुत थी पर उनमे मुख्य दो पार्टिया थी—एक सूर्य की और दूसरी चन्द्रमा की। सूर्य का चिन्ह था हाथ और चन्द्रमा का निशान था चर्खा कातती बुढिया। बस, दोनो ही पार्टिया अपना-अपना प्रचार करने लगी। सूर्य और चन्द्रमा दोनो ही छोटे मोटे ग्रह-नक्षत्र-तारा सभी

के पास पहुचने लगे । सूर्य, जिस किसी के पास पहुचता उन्हे अपने रोब से ही कहता—तुम्हे वोट मुझे देना है, यदि तुमने वोट मुझे नही दिया तो जानते हो मेरे मे कितनी शक्ति है ? तुम्हारी नीद हराम कर दू गा । शान्ति से जीना दुस्वार कर दू गा । जला-जलाकर राख कर दू गा । तुम्हारा भला इसी मे है कि तुम मुझे ही वोट दो ।

चन्द्रमा भी अपना प्रचार-प्रसार करने के लिये सभी के पास पहुचने लगा । पर उसके प्रचार का तरीका सूर्य से ठीक विपरीत था । सूर्य मे प्रचण्डता थी, अपना दवाव था तो चन्द्रमा मे शीतलता थी और सरलता थी । चन्द्रमा सभी से हाथ जोडकर सौम्य-व्यवहार करते हुए कहता—भाईयो । अपने सौरमण्डल की सुव्यवस्था की जिम्मेदारी आप सभी पर है । अब आपको निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है कि--सौरमण्डल की व्यवस्था कैसे जमाई जाय? एलेक्शन भी इसीलिए हो रहा है । मुझे इलेक्शन मे खडे होने के लिए आप लोगो ने ही प्रोत्साहित किया है । अत मुझे वोट देकर विजयी बनाने मे मेरी नही आप सबकी विजय होगी । मै आप सबको चमकने का अवसर दू गा । आपकी चमक मेरी चमक होगी । अब आपको क्या करना है, यह आप पर निर्भर है ।

चन्द्रमा के इस अपनत्व पूर्ण व्यवहार ने सौर-मण्डल के सदस्यो का मन जीत लिया । सभी ने मन ही मन निर्णय किया वोट तो चन्द्रमा को ही देगे ।

एलेक्शन का दिवस आ गया । सभी ने वोट दिए । मतगणना हुई तो ज्ञात हुआ कि ८० प्रतिशत वोट चन्द्रमा

के पक्ष मे थी। केवल २० प्रतिशत वोट सूर्य के पक्ष मे थे। चन्द्रमा के विजयी होने से सौर-मण्डल की सरकार चन्द्रमा की वनी।

सूर्य झुझला गया। अपमान का घूट पीकर वहा से निकला और आकाश मे प्रचण्डता के साथ तपने लगा। सूर्य के क्रोध और अभिमान को देखकर बीस प्रतिशत सदस्य भी उसे छोडकर चन्द्रमा के पास चले गये। दल वदल कर लिया। अव पूरे सौर-मण्डल पर चन्द्रमा का आधिपत्य हो गया, विचारा, सूर्य सुवह से शाम तक आकाश मण्डल का अकेला चक्कर लगाता है, उसके साथ कोई भी दृष्टिगत नही होता। आदमी भी उसके प्रकाश का उपयोग जरूर करता है, पर उसे वह भी देखना नही चाहता, क्योकि सूर्य मे अभिमान इतना है जिससे आदमी डरता है कही ये मेरी आखे न फोड दे।

सच है जो अपने ही रौव मे रहता है उसका यही हाल होता है।

सूर्य के छीपते ही चन्द्रमा अपने दल-वदल के साथ आकाश-मण्डल मे आता है। खुद भी चमकता है और दूसरो को भी चमकने का पूरा-पूरा अवसर देता है। आदमी भी उसकी सुषमा देखकर वडा प्रसन्न होता है वार-वार उसे देखने की इच्छा रखता है, उससे उसे शीतलता मिलती है।

जो स्वय भी जीता है, और दूसरो को भी जीने का अवसर देता है, वही सच्चा नेता वनता है।



(६४)

गधे की पुकार

एक बार जगल मे पशुग्रो का सम्मेलन हो रहा था। गाय-भैस, ऊट-वैल, गधे-घोडे, शेर-वकरी सभी प्रकार के पशु एकत्रित हुए थे। और सभी अपनी-अपनी राम कहानी सुना रहे थे। इसी बीच गधे ने अपनी वेदना व्यक्त करते हुए कहा—भाइयो! मेरे मन मे बहुत समय से एक दुख उभर रहा है जिसके कारण मेरा खाना-पीना हराम हो रहा है। मैंने अपने दुख को दूर करने की बहुत कोशिश की लेकिन वह दूर नही हुग्रा तो मैंने सोचा—मै अपनी बात ग्राप सबके सामने रख दू, जिससे ग्राप मेरा दुख दूर कर सके। गधे की बात सुनकर सभी एक साथ बोले—गधे भाई! जरूर कहो, जरूर कहो। हम तुम्हारे दुख को दूर करने की पूरी-पूरी कोशिश करेगे।

अपने भाईयो की हमदर्दी पर गधा सतुष्ट हुग्रा और अपनी अन्तर्वेदना बतलाने लगा—भाइयो! सृष्टि का बुद्धिमान प्राणी मानव गधे को मूर्ख और अज्ञानी क्यो समझता है? जब भी कोई व्यक्ति नासमझी का काम करके ग्राता है तो वह उसे गधा कहता है। गधा है गधा, इसमे बिल्कुल

भी अक्कल नही है । आदमी ने पूरे मानव जगत् मे मुझे बदनाम कर रखा है, आखिर मुझ मे क्या अज्ञान है, जिससे मुझे वुद्धिहीन माना जाता है, जवकि मानव के कार्यो मे मै वहुत सहयोग देता हूँ ।

गधे की वात सुनकर सभी पशुओ ने कहा—वाह भाई ! वात तो तुम्हारी सच है । तुम मे मूर्खता का कोई लक्षण दिखलाई नही देता । वहुत सीधे और भोले प्राणी हो । फिर आदमी तुम्हे गधा क्यो कहता है ? वुद्धिहीन क्यो समझता है ? कुछ समझ मे नही आया । सभी पशुओ ने वहुत विचार किया पर जव वे इस वात का निर्णय न कर सके तो सोचा इस विषय मे मानव से ही पूछना चाहिये । वही वता सकता है कि वुद्धिहीन व्यक्ति को गधा कहकर क्यो पुकारता है ?

इधर एक आदमी उसी रास्ते से जा रहा था। उसे देखकर घोडा हिनहिनाया–अरे ! आदमी जा रहा है । पूछो उसे कि हमारे भाई को गधा क्यो कहते हो ? पर वह तो हमारी भाषा समझता नही है । वडी समस्या है ।

इतने मे होशियार कौआ वोला—अरे ! तोता, मानव को उसकी भाषा मे वोलकर समझा देगा। सभी ने कहा—हा-हा ठीक है । तव तोते ने पशु सम्मेलन मे खडी हुई समस्या को मानव के सामने रखा और उससे पूछा कि तुम मूर्ख को गधा क्यो कहते हो ?

मानव ने कहा—हम मूर्ख को गधा इसलिए कहते है कि गधे मे कोई अक्कल नही होती । इतने मे गधा वीच मे ही ढेच्यू-ढेच्यू करने लगा—कहने लगा कि यह कैसे ?

व मानव बोला—गधा ज्यादातर कु भकार के काम मे आता । जब गधा गुम हो जाता है, तब कु भकार उसे खड्डो मे ोजता है क्योकि गधा घास चरता-चरता चलता जाता है। ागे गढ्हा है उसका भी ध्यान नही रखता है और उसमे ार पडता है । जिसे सामने गड्ढे का भी ध्यान न हो, ह गधा ही होता है ।

आदमी का निर्णय सुनकर सारे पशु समझ गए कि स्तुत गधे मे अक्कल नही होती है, वह आगे-पीछे का ोच नही पाता है ।



रूप तो सुन्दर है पर कुरूपता से भरा है,
ज्ञान तो बहुत है पर अह मे भरा है ।
वर्तमान की इस दुरगी दुनिया मे,
पोज तो बहुत अच्छा है पर बुराइयो से भरा है ।।

धागो को जोडा तो परिधान बन गया,
ईटो को जमाया तो मकान बन गया ।
मानवता के बिखरे कणो को जिसने भी,
अतर मे सजोया वही सही इमान बन गया ।।

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

(६५)

सृष्टि का विचित्र प्राणी

एक वार कुछ आदमी वन-पथ से निकल रहे थे। उन्होने चलते-चलते बबूल के झाडो के पास ऊट को खडे देखा तो एक आदमी ने प्रतिक्रिया की—वाह यह सृष्टि का कैसा विचित्र प्राणी है ? सभी अगो से टेढा-मेढा और बेडोल है। टागे भी ऐसी लम्बी-लम्बी है कि जैसे कोई खभे गडे हो और खाता भी क्या है ? काटे और कुछ पत्ते। वडा विचित्र और अभद्र दिखता है यह। इसका पेट देखो तो पूरी कोठी लगता है और गर्दन भी कैसी टेढी-मेढी और लम्बी है।

आदमी को अपने वारे मे कहते हुए देखकर ऊट ने आवाज की और बोला—अरे बुद्धिमान् इन्सान ! बहुत हो गया बोलते-बोलते। यह सत्य है कि मेरा शरीर टेढा-मेढा और बेडोल है। पर तुम तो वडे सीधे हो ना। तुमने अपने वाहरी जीवन को भले ही सुन्दर-शालीन वना रखा है पर जरा सोचो तुम्हारे भीतर मे कितना टेढापन है ? छोटी-छोटी वातो मे तुनक पडते हो। अपने स्वार्थ मे दूसरे का गला घोटने के लिए तैयार हो जाते हो। तुम्हारे

व्यवहार को देखा जाय तो तुम पग-पग पर टेढे-मेढे चल रहे हो। खाते भी तुम बढिया-बढ़िया पकवान हो। न मालूम कितने प्रकार का धान्य है? और कितनी ही प्रकार से बनाते हो? कितनी ही प्रकार की मिठाईया खाते हो। फिर भी तुम दूसरो को कड़वे ही बोलते हो। और काम किसी के भी नही आते हो। मै भले काटे खाता हू, फिर भी किसी को भी कडवा वचन नही बोलता हू और तुम मानवो के कार्यो मे पूरा सहयोग देता हूँ।

बोलो दुनिया का विचित्र और अभद्र प्राणी कौन है—तुम हो या मैं? बाहरी टेढापन जितना घातक नही है उतना भीतरी टेढापन है। ऊट के मुह से निकली सच्ची बात का मानव कुछ भी प्रतिकार नही कर सका और आगे बढ गया।



मृत्यु को जग मे क्रूर कराल कहते है,
निर्जीव देह को जग मे नर ककाल कहते है।
शरीर को नही आत्मा को समझना होगा,
आत्मा को ही जग मे दिव्य मशाल कहते है॥

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

(६६)

पाषाण की महत्ता

जगल मे एक विशालकाय पाषाण यो ही पडा था। अनेक आदमी आ रहे थे, जा रहे थे, पर किसी का भी ध्यान उस ओर नही था। अपनी इस कदर घोर उपेक्षा देखकर पाषाण तिलमिला उठा। सोचने लगा-वह छोटा-सा फूल, जिसे सूंघने के लिये आदमी उसके पास पहुच जाता है। वह छोटा सा सरोवर, पानी पीने के लिये आदमी उस के पास पहुच जाता है। यह हिलता–डुलता झाड, जिसकी छाया मे भी आदमी पहुचता है पर मैं इतना बडा भीम-काय हूँ तो भी आदमी मेरे पास आने की वात तो दूर रही, मुझ पर दृष्टिपात भी नहीं करता। आखिर ऐसा क्यो ? क्या करू मैं कि दुनियाँ के लोग मेरे पास भी दौडे-दौडे आने लगे। मुझे भी चाहने लगे। पत्थर ने वहुत सोचा—पर उसकी समझ मे कुछ भी नही आया। आखिर थककर उसने सोचना वद कर दिया। पर उसके दिमाग मे यह वात वार-वार घूम रही थी— कैसे भी हो, ये लोग मुझे भी चाहे।

एक वार एक आदमी जो उसी रास्ते से निकल रहा था, उसकी दृष्टि इस विशालकाय पत्थर पर पडी तो वह

विचार मे पड गया। पहुचा उस पत्थर के पास और उसका सूक्ष्मता से चारो तरफ से निरीक्षण करने लगा। किसी आदमी को अपनी तरफ इस प्रकार निरीक्षण करते देखकर पाषाण ने सोचा—यह आदमी मुझे क्यो देख रहा है ? अब तक जितने भी आदमी आए वे तो बिना देखे ही आगे बढते चले गए और यह तो मुझे बडे गौर से देख रहा है। कुछ न कुछ खास बात होनी चाहिए। पत्थर मुखर हो उठा—सृष्टि के समझदार इन्सान ! तुम मुझे यो गौर से क्यो देख रहे हो ? क्या मुझ मे भी कोई विशेषता है ?

आदमी ने कहा—अरे वाह ! तुझ मे तो बहुत विशेषता है पर देखने वाला चाहिये। पाषाण—अरे भाई ! तुम ही एक ऐसे व्यक्ति आए हो जो ऐसा बोल रहे हो। बाकी तो तुम्हारे भाई जितने भी आए है, वे तो मुझे बिना देखे ही आगे बढ गये। आदमी—वे नही जानते, तुम्हारी विशेषताओ को। पर मै जानता हूँ तुम्हारे मे कितनी विशेषता है ?

पत्थर—अगर ऐसा है तो मेरी विशेषताओ को तुम उभार दो, जिससे सभी लोग जानने लग जाए। और मुझे भी लोग चाहने लगे।

मानव—मै तो तुम्हारी विशेषताओ को उभार सकता हू पर उसके लिए तुम्हे कठिनतम दु खो को सहन करना होगा। यदि तुमने दु ख सहन कर लिये तो निश्चित ही तुम्हे ऐसा बना दू गा कि लोग तुम्हे देखने के लिये हजारो मील की दूरी से भी दौड-दौड आवे। बडी-बडी पत्रिकाओ मे तुम्हारा नाम और फोटो हो।

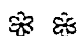
पत्थर—वाह-वाह ! अगर इतना तुम कर दो तो मै

तुम्हारा उपकार कभी नही भूलू गा। इसके लिए मुझे जितना भी कष्ट सहना पडे, सह लू गा।

पत्थर की इस दृढता को देखकर उस आदमी ने उसी समय छैनी और हथौडा निकाला और उस विशालकाय पत्थर को एक अत्युत्तम मूर्ति का रूप देने के लिये तरासने लगा। जब छैनी से वह मूर्तिकार पत्थर के अतिरिक्त तत्वो को हटाने लगा। पत्थर बार-बार की इन चोटो से कराह उठा और बोला—अरे भाई मुझे तो भयकर वेदना हो रही है। तब मूर्तिकार ने कहा--देखो भाई ! मैने तुम्हे पहले ही कह दिया था कि घोर कष्ट होगा। अगर तुम इसे सहन कर लोगे तो तुम महान् हो जाओगे। अगर इस तरह से घबराओगे तो महान् नही बन सकते।

पत्थर ने यह निर्णय ले लिया था कि कुछ भी हो जाय, मुझे महान् बनना है। उसने कहा--अच्छा-अच्छा अब नहीं बोलू गा। तुम्हे, जो इच्छा हो सो करो। बस, फिर क्या था ? मूर्तिकार बडी तन्मयता के साथ अपनी कला को पत्थर मे उभारने लगा। पत्थर, मूर्तिकार की सारी चोटो को समभाव मे सहन करता चला गया। आखिर मूर्तिकार की दक्षता एव पत्थर के समभाव ने चमत्कार दिखाया और वह पत्थर एक अतीव सुन्दर आकृति मे उभर आया। अब तो हजारो लोग उसे देखने के लिये आने लगे। मूर्तिकार के कहे अनुसार पत्र-पत्रिकाओ मे उसके फोटो भी छपने लगे। यह सब देखकर पाषाण प्रसन्न हो उठा।

वस्तुत महान् बनने के लिए दु ख के थपेडो को तो सहन करना ही होता है।



(६७)

अपात्र को शिक्षा

आकाश मे घटाटोप बादल छा गए। गभीर गर्जना होने लगी। बिजलिया चमकने लगी और कुछ ही देर बाद वर्षा प्रारभ हो गई। मूसलाधार पानी पडने लगा। थल भी जल परिलक्षित होने लगी। सभी मानव अपने-अपने घरो मे दुबके हुए थे। जगल मे पक्षी भी अपने-अपने घोसलो मे बैठे प्रकृति का भयावह रूप देख रहे थे। एक वृक्ष पर अनेक पक्षी अपन-अपने घोसलो मे बैठे हुए थे। उसी वृक्ष पर एक बन्दर भी बैठा था। वर्षा बहुत तेज हो रही थी। इसलिए बदर भीग रहा था। इधर पानी से भीगने के और इधर तेज हवा के चलने से बदर को ठण्ड लगने लगी उसका सारा शरीर कापने लगा, दात हिलने लगे। बिचारा जैसे-तैसे डाल को पकड कर बैठे हुए था।

बन्दर की यह दयनीय दशा देखकर अपने घोसले मे बच्चो के साथ सुरक्षित रूप मे बैठी मैना से रहा नही गया और वह बोल उठी—बन्दर भाई! तुम आये साल इसी तरह बरसात मे भीगते रहते हो, सर्दी मे ठिठुरते रहते हो कितना अच्छा हो कि तुम मेरी तरह रहने के लिये मकान

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

का निर्माण कर लो । मेरे तो हाथ–पैर कुछ नही है–चोच मे तिनके भर–भर कर जैसे–तैसे घोसला बनाती हूँ पर तुम्हारे तो मनुष्य सरीखी काया है । तुम तो बहुत जल्दी और बहुत मजबूत घोसला वना सकते हो ताकि इस तरह तुम्हे ठिठुरना न पड़े ।

मैना ने तो बदर को हित–शिक्षा दी थी, परन्तु बदर पर शिक्षा का उल्टा ही असर हुआ । आखिर ठहरा तो बदर ही । वह कब मानने लगा- मैना की शिक्षा को उसे तो तेज गुस्सा आ गया और उसने एक ही झपाटे मे मैना के घोसले को तोड डाला और बोला - अरे दुबली जान ! छोटा मुह बडी बात करते हुए तुम्हे शर्म नही आती, तुम मुझे शिक्षा देने चली हो । क्या मै नही समझता ? याद रखो । बडो के सामने जीभ चलाओगी तो ऐसे ही चोट खाओगी । अभी तो मैने तुम्हारा घोसला ही तोडा है, आइन्दा मेरे से जुबान लडाने की कोशिश की तो तेरी जान निकाल दूगा ।

बन्दर की इस हेवानियत को देखकर विचारी मैना अपने किये पर पछताने लगी ।

सच है, कुपात्र को शिक्षा देना निश्चित ही स्वय के लिये हानिकारक होता है । सर्प को दूध पिलाने से जहर ही बनता है ।



(६८)

दीपक का धुआं काला क्यों ?

दीपक का रग लाल है, उसका तेल पीले रग का है, उसकी वाती सफेद है और उसकी लौ भी लाल है, तब उसका धुंआ काला क्यो है ? आदमी के दिमाग मे दीपक को देखकर यह प्रश्न खडा हो गया ।

वह यह विचार कर ही रहा था, इतने मे दीपक मुखर हो उठा - ए बुद्धिमान् इन्सान ! क्या तुम्हे मालूम नही है कि मैं काला–काला अधकार खाता हूँ । मेरा भक्षण ही जब काला है तो मेरी जुगाली भी काली ही होगी । काले अधकार को खाने मे मेरा धुआ भी काला ही निकलता है । तुम्हारी भी यही हालत है, भले तुम्हारा बाहर का पोश मेरे समान कितना ही सुन्दर दिखलाई देता हो, पर जैसा कर्म तुम करोगे, फल भी निश्चित रूप से वैसा ही भोगना पड़ेगा । यह कभी नही होता कि कर्म तो तुम पापमय करो और फल तुम्हे सुखमय प्राप्त हो जाय और कर्म करो पुण्य रूप और फल तुम्हे दुःखमय मिले । ससार का यह अटल नियम है कि—

जैसा बोओगे-वैसा काटोगे,
जैसा बोलोगे-वैसा सुनोगे,
जैसा करोगे वैसा ही भरोगे ।

आम का बीज बोने वाला आम ही पाएगा, कविठ कभी नही पा सकता और कविठ का बीज बोने वाला आम कभी नही पा सकता । काच के अन्दर वही रूप आएगा, जैसा तुम्हारा है । इसलिए हे इन्सान ! मेरा भक्षण काला है तो परिणाम भी काला ही होगा । दीपक की न्यायोचित बात सुनकर इन्सान स्तब्ध रह गया । वह मान गया कि-

जैसा करेंगे, वैसा ही भरेंगे ।



❀ गुरु भक्ति

मन मेरा तेरी ही यादो मे खोया रहे,
तन मेरा तेरे ही वादो मे पिरोया रहे ।
तेरे ही पथ पर बढता रहू अविरल,
हृदय मेरा तेरे ही पादो मे सोया रहे ।।

अस्तित्व की विलुप्त शक्ति को तुमने ही जगाया है,
जीवन पथ प्रशस्त बनाकर जीना सही दिखाया है ।
क्या कहू मैं तेरी गरिमा कही नही कुछ जाती,
शासित हो शासक बनकर शासन खूब चमकाया है ।।

(६९)

वार्ता : चलनी और सुई की

एक वार चलनी और सुई दोनो मे परस्पर यो वार्तालाप होने लगा—अपनी शेखी बघारते हुए चलनी ने सुई को कहा वाह नन्ही-सी जान ! ऊपर मे छेद और नीचे से तीक्ष्ण । चुभ जाय तो खून निकाल दे । फिर भी अपनी विशेषताओ का ढिढोरा पीट रही हो ।

चलनी की व्यग्यात्मक बात सुनकर सुई ने अतीव शक्ति के साथ जवाब दिया--चलनी बहिन ! आज तो तुम बहुत अभिमान मे आकर न मालूम क्या-क्या कहती चली जा रही हो पर कहने मे पहले जरा अपने लिए कुछ सोच लिया होता तो इस प्रकार कहने का अवसर नही आता । यह तो ठीक है कि तुम्हारी देह बहुत चमकदार है, पर देखो तो सही तुम्हारे भीतर सैकडो छिद्र नजर आ रहे है । यही नही, तुम्हे कोई भी वस्तु दी जाएगी तो तुम सार-सार वस्तु को अपने भीतर से निकाल दोगी और असार-असार वस्तु रख लोगी । प्रारभ से ही तुम्हारी इस परपरा ने तुम्हारे विचार भी विकृत बना दिये है ।

बाहर से तुम भले सुन्दर दिखलाई देती हो पर भीतर मे तुम्हारे सैकडो छिद्र है, अवगुणो का पिटारा है। पर मुझे देखो, मेरे ऊपर एक छिद्र और नीचे तीक्ष्ण भाग, विशेष अवस्था को लेकर है। छिद्र मे डोरा लेकर मैं व्यक्ति के सकेतानुसार दो बिछुडे भाई-कपडो मे प्रवेश कर उन्हे एक करती चली जाती हूँ। मेरे इस छोटे से दिखने वाले कार्य का ही परिणाम है कि आज आदमी का तन-बदन ढका हुआ है। भले मेरा देह छोटा-सा है, फिर भी विशेषता युक्त है।

सुई की बात सुनकर चलनी की सारी हेकडी मिट्टी मे मिल गई।

दूसरो के विषय मे कुछ कहने से पहले स्वय के गिरेबान मे झाक लेना आवश्यक है।



अथक परिश्रम को जिसने जीवन मे अपनाया है।
चिन्तन की धारा को जिसने जीवन मे बहाया है।
झुक जाता है मस्तक मेरा ऐसे ही के चरणो मे,
ममता के निर्झर मे जिसने अपने को नहलाया है॥

(७०)

लोहा, सोना कैसे बने ?

कुछ पाने के लिये कुछ देना भी होगा। हम यह चाहे कि पाने के नाम पर तो हम सब कुछ प्राप्त कर ले, पर दे कुछ नही, यह सभव नही है।

टनो बद लोह एक स्थान पर पडा था और उसी के ऊपर पारसमणि भी पडी हुई थी। पारसमणि को अपने ऊपर पडी देखकर लोहे ने कहा वाह ! क्या सुयोग मिला है। पारसमणि को सबोधित करते हुए लोहा बोला— पारसमणि ! मैने सुना है कि तुम्हारे स्पर्श से लोहा भी सोने के रूप मे बदल जाता है। कितना अच्छा हो कि तुम मुझे भी सोना बना दो। पर मैं तो यह देख रहा हू कि तुम मेरे ऊपर स्थित हो तो भी मेरा रूप तो लोहे का ही है, फिर तुम्हारी शक्ति का क्या असर।

लोहे की बात सुनकर पारसमणि बोली—देखो भाई लोहे ! यह सत्य है कि मैं लोहे को स्पर्श मात्र से सोना बना देती हूँ पर स्पर्श होना चाहिए साक्षात्। अगर उसमे कोई अन्य तत्व बीच मे आ जाता है तो फिर लोहा, सोना

नही बन सकता । अगर तुम्हे सोना बनना है तो तुम अपने ऊपर जितने भी यह बारदान-कपडो के आवरण है उन्हे हटा दो और फिर मेरी देह से थोडा सा स्पर्श करो। बस तुम्हारा सारा शरीर स्वर्णमय हो जाएगा ।

लोहा--पर यह तो संभव नही है । मै अपने आवरण को खोलकर नग्न नही होना चाहता । तुम तो मुझे यो ही सोना बना दो तो अच्छा है ।

पारसमणि--यह नही हो सकता। कुछ पाने के लिए तो कुछ खोना ही होगा । तुम अगर यह नही कर सकते तो सोना भी नही बन सकते ।



❀ गुरु भक्ति

चेतना के ऊर्ध्व स्तर पर चल रहे हो तुम,
साधना के डगर पर बढ रहे हो तुम ।
बढते ही जा रहे हो बढते ही जा रहे हो,
उन्नति के शिखर पर बढते ही जा रहे हो तुम ।।

समता ही है सच्ची आराधना तेरी,
समता ही है सच्ची साधना तेरी ।
विश्वशाति के प्रतीक हो तुम,
समता ही है सच्ची विचारणा तेरी ।।

(७१)

स्वार्थ--आदमी का

एकदा आदमी इधर-उधर भटकता हुआ घोर जगल मे पहुंच गया। जगल की साय-साय की आवाज से उसका तन-बदन कापने लगा। इतने मे ही चीते की गभीर दहाड सुनाई दी। इस दहाड ने तो आदमी के पैर ही उखाड दिये। वह बचने के लिये इधर-उधर देखने लगा। पास ही एक वृक्ष पर मानवाकृति बन्दर बैठा था। मानव की यह दीन हालात् देखकर उसे दया आ गई। वह जोरदार चीखा और बोला अरे नादान इन्सान ! क्या देखता है इधर-उधर। जल्दी से चढ जा वृक्ष पर। चीता इसी रास्ते से आ रहा है। नही तो वह तुझे खा जाएगा। प्राण गवा बैठोगे तुम।

बन्दर की सात्वना भरी आवाज से आदमी के मन मे जोश उभर आया और वह बिजली सी स्फूर्ति से वृक्ष पर जा चढा। बन्दर के साथ आदमी को भी वृक्ष पर देख-कर चीता उस वृक्ष के नीचे आ खडा हुआ और इन्तजार करने लगा कि यह कब नीचे उतरे और कब खाऊ। पर बहुत समय के इन्तजार के बाद भी जब आदमी नीचे नही

आया तो चीते ने अक्कल से काम लिया। सोने का समय था। आदमी और बन्दर ने परस्पर निर्णय लिया। बन्दर ने कहा—कुछ समय तक तुम सो जाओ, मै जगता रहूँगा फिर मै सो जाऊँगा, तुम जगते रहना। आदमी ने बन्दर की बात मान ली।

आदमी सो रहा था, बन्दर जाग रहा था। चीता बोला--बन्दर! तुम वन के प्राणी हो और मै भी वन्य प्राणी हूँ। आदमी से हमारा क्या सम्बन्ध? आदमी होता भी धूर्त है। विश्वासघाती होता है। अतः मेरी बात मानो और इसे नीचे गिरा दो।

बन्दर ने कहा--चीते! मैं कदापि ऐसा नही कर सकता। मैंने ही इसकी रक्षा की है। मैं इसे नही गिराऊँगा। चीते के बहुत प्रयत्न करने पर भी वह तैयार नही हुआ। तब चीते ने बन्दर के सो जाने एवं आदमी के जगने पर आदमी को समझाना प्रारभ किया--तुम बन्दर को नीचे गिरा दो तो मैं तुझे छोड दूगा। अन्यथा तुम पेड को छोडकर जा नही सकते और मैं यही खडा रहूँगा। नीचे आते ही तुझे खा जाऊँगा।

स्वार्थी इन्सान, चीते की बातो मे आ गया और बदर को गिराने के लिए ज्यो ही उसके हाथ लगाया कि चचल बदर सजग हो गया। उसने देखा आदमी ही मुझे गिरा रहा है। वह तत्काल एक शाखा से दूसरी शाखा पर, एक पेड से दूसरे पेड़ पर कूदता हुआ, आदमी से दूर चला गया और बोला--

ऐ जगत् के श्रेष्ठ प्राणी । नमस्कार है तुम्हे ! मैंने नही समझा था कि आदमी, इतना धूर्त्त, कृतघ्न और स्वार्थी होता है कि उसको जो रक्षा करता है, उसी को मारने पर उतारू हो जाता है । अब तो उस आदमी की दशा देखने लायक थी ।

सत्य है पर रक्षण को गौण कर अपने ही रक्षण मे निमग्न स्वार्थी व्यक्ति कभी भी सच्ची प्रतिष्ठा प्राप्त नही कर सकता ।



सवर्तक तूफान जैसा कोई तूफान नही होता,
स्वयभू समुद्र जैसा कोई समुद्र नही होता ।
दीनो के झरते आसुओ को पोछना सीखो,
परोपकार जैसा कोई उपकार नही होता ।।



आज वन ही वन की दौड लगी है,
आज एक दूसरे की होड लगी है ।
आज का मानव नही समझ रहा हैं कि,
आज विनाश की ओर ही घुडदौड़ लगी है ।।



(३७)

ड्राइवर और गाड़ी

तीव्र और वेग के साथ चल रही कार मे बैठे मुन्ने ने पापा से पूछा—पापा! गाड़ी इतनी तेज कैसे चल रही है?

पापा ने कहा—मुन्ना ! गाड़ी का ड्राइवर गाडी के एक्सीलेटर को दबाए हुए है इसलिये गाडी तेज चल रही। तो पापा! कार इधर-उधर खड्डे मे नही गिरती, सीधी सडक पर कैसे चल रही है ? मुन्ने के इस प्रति प्रश्न को सुनकर उसके पापा ने कहा—बेटे! गाडी का स्टेयरिंग ड्राईवर के हाथ मे है। ड्राईवर जब तक सजगता पूर्वक उसे सभाले हुए है। तब तक गाडी रोड पर चलती रहेगी। ड्राईवर की थोडी सी असावधानी गाड़ी को और गाडी मे बैठने वाले लोगो के जीवन को खतरे मे डाल सकती है।

ठीक इसी प्रकार गुरु शिष्य को समझाते है—इस शरीर रूपी गाडी का ड्राईवर चेतन है। जब तक चेतन सजग है, तभी तक गाडी व्यवस्थित चल सकती है। चैतन्य आत्मा की थोडी-सी असावधानी, जीवन की गाडी को अधः पतन मे ढकेल देती है।

(३८)

"हीटर और एयर कंडीशन"

हीटर और एयर कडीशन दोनो ने मिलकर पावर हाऊस से फरियाद की । आपने हम दोनो का रूप अलग-अलग क्यो वना दिया ? हीटर कहता है मुझ मे से उष्मा ही निकलती है, जिससे इन्सान मुझे गर्मी मे तो चाहता ही नही है, एयर कडीशन कहता है, मेरे से ठण्डक ही ठण्डक निकलती है । इस कारण इन्सान सर्दी मे मुझे नहीं चाहता है कितना अच्छा हो कि आप हम दोनो को सर्दी मे उष्मा देने वाला एव गर्मी मे ठन्डक देने वाला पावर दे दे। ताकि हम दोनो अवस्थाओ मे काम आ सके ।

हीटर और एयर कडीशन की वात सुनकर पावर हाउस ने कहा—देखो भाइयो ! मै जो पावर हीटर को देता हूँ । वही पावर एयरकडीशन को भी देता हूँ । मैं तो एक समान पावर देता हूँ । मेरे पावर मे कोई ठण्डा-पन या उष्णता नही होती यह तो तुम्हारी मशीन ही ऐसी है कि तुम मेरे पावर को अपने अपने रूप मे वदल लेते हो, यह दोष मेरा नही तुम्हारा ही है । तुम्हे अपनी पात्रता-योग्यता वदलानी होगी ।

ठीक इसी प्रकार हर प्राणी मे परमात्मशक्ति समान रूप से रही हुई है। पर कर्मों के विक्षेप से सभी प्राणी अलग-अलग रूप मे दिखाई देते है। परमात्म रूप मे कोई असमानता नही है। पर जब तक कर्मों का विक्षेप दूर नही हो जाता तब तक परमात्म की अभिव्यक्ति नही हो सकती। इसीलिए अपना ही सशोधन करना होगा। अपनी पात्रता-योग्यता इस रूप मे बनाए कि हम मे परमात्मा की पूर्ण अभिव्यक्ति हो जाय।



म्यान है तो तलवार भी होनी चाहिये,
आकार है तो निराकार भी होना चाहिये।
भक्ति करने के लिये मेरे उपासको !
भक्त है तो भगवान् भी होना चाहिये॥

टूटा हुआ सोना भी जोड दिया जाता है,
जुडा हुआ दिल भी तोड दिया जाता है।
पर बुद्धिमानो के द्वारा जग मे,
टूटा हुआ दिल भी पुन जोड दिया जाता है॥

(३९)

"संघर्ष नदी और समुद्र का"

तटानुवधित नदी ने जब देखा कि समुद्र बिना किसी तट के फैलता चला जा रहा है और हजारो तरगे उछालता हुआ ठाठे मार रहा है। उसे न कोई कहने वाला है और नही कोई पूछने वाला है। और मुझे दोनो तटो ने वाध रखा है। कितना अच्छा हो कि मै भी समुद्र की तरह विराट् रूप धारण कर लू। और समुद्र की विराट्ता को विध्वस कर दू। विना अपनी औकात को देखे नदी भिड पडी समुद्र मे, और वहुत देर तक समुद्र से सघर्ष करती रही। पर आखिर तो हारना ही था।

नदी ने समुद्र मे भिडकर अपना अस्तित्व भी खत्म कर दिया। चौवेजी, छव्वेजी वनने गए तो दुव्वेजी ही रह गए। नदी का मीठा पानी भी खारा हो गया। जव तक वह तटानुवधित थी, तव तक उसका जो महत्व लोगो की दृष्टि मे था, वह भी खत्म हो गया। पहले लोग उसके पानी को वहुत पीते थे, क्योकि वह मीठा था। पर नदी ने समुद्र से सघर्प कर अपने मीठेपन को भी खत्म कर दिया। अव उसे कोई पूछने वाला नही रहा।

कई महत्वाकाक्षी व्यक्ति अपनी स्थिति को नही समझते हुए अपने आपको बडा बतलाने के चक्कर मे बडे-बडे व्यक्तियो से सघर्ष कर बैठते है। इस सघर्ष मे निश्चित रूप से उनकी विजय तो नही होती, बल्कि और उन्हे मुह की खानी पड़ती है। ऐसे व्यक्ति पूर्वापेक्षा और अधिक निम्न स्तर की ओर बढ जाते हैं।

जिस प्रकार पहाड मे टकराकर कोई व्यक्ति अपना कल्याण नही कर सकता, वैसे ही अपनी औकात से अधिक महत्वाकाक्षा रखने वाला व्यक्ति कभी भी जिन्दगी मे सफल नही हो सकता। यदि जिन्दगी को सुखमय-शान्तिमय बनाना है तो मर्यादा के तटो मे रहकर चलना होगा—जिससे निरन्तर सफलता प्राप्त हो सके।



वीती वातो का रोना अब मत रोइये,
रक्त से रजित कपड़े को रक्त से मत धोइये।
भौतिकता के रगमच पर आकर के,
अमूल्य क्षणो को अव प्रमाद मे मत खोइये॥

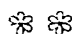
जो पार करे गुणस्थानो को उसे उत्थान कहते है,
पर हित मे खपादे अपने को उसे महान् कहते है।
मनुष्य तो बहुत हैं दुनिया मे पर,
पर पीडा अपनी समझे उसे सही इन्सान कहते है॥

संगति किसकी करे ?

वडो से सगति करो पर उससे नही जिससे अपनी प्रतिष्ठा ही मिट्टी मे मिल जाय । नदी ने देखा समुद्र बहुत विशाल, विराट एव व्यापक है । अपने उदर मे अनेक रत्न मणि–माणिक्य सजोए हुए है । समुद्र की विशालता किसी से नापी नही जा सकती । गहरा भी इतना है कि सबको अपने मे पचाने की क्षमता रखता है । मुझे अवश्य ऐसे व्यक्ति मे सपर्क साधना चाहिए । नदी ने समुद्र के गुण दोप की पूरी समीक्षा किये विना ही समुद्र से सपर्क करना प्रारम्भ कर दिया । जव तक सामान्य मैत्री रही, तव तक तो सव ठीक ठाक चलता रहा, पर जव नदी ने समुद्र से घनिष्ठता के लिये हाथ वढाया तो समुद्र ने एक ही झटके मे पूरी की पूरी नदी को अपने मे समा लिया । अव नदी का कोई अस्तित्व हो नही रहा । न नाम और न हो कोई काम, उसकी सारी प्रतिष्ठा खत्म हो गई ।

नदी की तरह कई व्यक्ति गुण–दोप का विचार किये विना ही कई व्यक्तियो से इतना अधिक सम्पर्क वढा लेते है कि जिससे उनकी प्रतिष्ठा भी मिट्टी मे मिल जाती है

वडो से सम्पर्क करना अच्छा है पर बडा अ कैसा वडा हो, यह जान लेना आवश्यक है ।



(४१)

"दीपक और भास्कर"

कमरे के एक कोने मे टिमटिमाते दीपक को देखकर सूर्य ने ललकारा- अरे मच्छर ! क्या औकात तेरी, कहाँ दुबका है अन्दर एक कोने मे जाकर और वहाँ भी पूरा प्रकाश नही दे पा रहा है। देख मुझे, स्वतन्त्रता के साथ आकाश मे घूमकर पूरे अग-जग को प्रकाशित कर रहा हूँ। तुम्हारी नन्ही सी जान को तो एक हवा का झोका भी खत्म कर सकता है। पर मेरा, हवा तो क्या, सवर्तक जैसा भयकर तूफान भी कुछ नही बिगाड सकता। मेरे अस्तित्व से पूरी दुनिया प्रभावित है। मेरे बिना तो दुनिया का काम ही नही चल सकता।

अभिमान के वश होकर सूर्य न मालूम क्या-क्या कहता चला गया। उसे भान नही रहा।

पर दीपक ने बडी ही शान्ति के साथ टिमटिमाते हुए भास्कर को, सबोधित किया—सूर्य नारायण ! आप जो कुछ भी फरमा रहे है, वह सत्य है, आपके प्रकाश के सामने मैं तो शेर के सामने मच्छर तुल्य भी हूँ। कहा आपका विशाल प्रकाश और कहा मेरा प्रकाश। पर एक बात तो

जरूर है जो काम मै कर सकता हूँ वह काम आप नही कर सकते ।

दीपक की वात सुनकर सूर्य को ताव आ गया और वह प्रचण्डता के साथ प्रकाश फैलाता हुआ बोला—अरे ओ पिद्दी तेरे मे ऐसी क्या विशेषता है कि जो तुम कर सकते हो, वह मै नही, जरा वतला तो सही ?

इतने मे बीच मे ही आदमी आ पहुचा और उसने चुपचाप टिमटिमाते दीपक की लौ का, बुझे अनेक दीपको की लौ से सस्पर्श कराकर उन्हे भी प्रकाश युक्त बना दिया और घर भर को दीपको से सजा दिया । आदमी के काम करके चले जाने के वाद दीपक ने बडे ही शान्त भाव से सूर्य से कहा–सूर्य देव ! देखा आपने अभी क्या हुआ ? सूर्य वोला- क्या हुआ कुछ भी तो नही । अरे सूर्य देव ! देखा नही आपने, मेरी ज्योति से मिलकर अनेक अप्रज्जवलित दीप जगमगा उठे । मेरे जैसे प्रकाशमान हो गए । क्या आप भी अपनी तरह किसी दूसरे को सूर्य वना सकते हो ।

यदि नही तो फिर आपकी सारी विशेषताए, इस विशेपता के पीछे दव जाती है ।

जो दूसरो को अपने समक्ष वनाएं वही वास्तव मे महान् है ।



(४२)

नर्तकी और सितार

नृत्य करती हुई नर्तकी से किसी ने पूछा—जब तुम नृत्य करना प्रारभ करती हो, तब तो बहुत धीरे-धीरे करती हो, पर जब तुम्हारे नृत्य के साथ सितार के तार झनझनाने लगते हैं, तबले पर थाप लगती है और ज्यो-ज्यो सितार के तार तेजी से झनझनाने लगते है, तबले तेजी से बजने लगते है, त्यो-त्यो तुम्हारा नृत्य भी तेज होने लगता है और ज्यो-ज्यो सितार के तार धीरे पडने लगते है, त्यो-त्यो तुम्हारा नृत्य भी धीरे होने लगता है और ज्यो ही सितार की आवाज बद हुई नही कि तुम्हारा नृत्य भी बद हो जाता है।

आखिर ऐसा क्यो ? नर्तकी ने पूछने वाले को बहुत ही सहज रूप से समझाया—बंधुवर ! यह सत्य है कि मै सितार की झनकार के साथ ही नृत्य करती हूँ। बिना सितार की झनकार के नृत्य नही हो सकता। सितार की झनकार का मेरे मन पर एक ऐसा असर होता है कि स्व-चालित यत्र की तरह मेरे पैर अपने आप थिरकने लगते है और मै अपना भान भूलकर नाचने लगती हूँ। सितारो की मधुर झनकार नाचने के लिए मुझे विवश कर देती है।

आदमी का मृदुल व्यवहार सामने वाले व्यक्तियो को निश्चित रूप से आकर्षित कर लेता है।

मृदुल व्यवहार से बड़े से बडे व्यक्ति को भी आकर्षित किया जा सकता है। ❀

(४३)

शेर और कुत्ता

कुत्ते के भौकने और शेर के दहाडने मे बहुत अन्तर है। कुत्ते के भौकने का सामना किया जा सकता है, पर शेर के दहाडने का नही।

एक बार एक साहसी कुत्ता जगल मे जा पहुचा। वहाँ उसने झाडियो मे से एक विशाल आकृति देखी तो उसे लगा कि यह कौन है? लगभग रूप रग मे तो मेरे जैसा ही दिखता है, पर आकार मे मेरे से बहुत बडा है। कुत्ते ने ताकत आजमाने की दृष्टि से भौकना प्रारभ किया। सोचा—देखते है कि इस मेरे सदृश भारी भरकम शरीर मे कितनी ताकत है? उस विचारे को क्या मालूम कि यह मेरे सदृश दिखते हुए भी बहुत विचक्षण एव शक्ति सपन्न है, कुत्ता नही, शेर है। जब शेर ने कुत्ते के भौंकने की आवाज सुनी तो सोचा—यह मच्छर यहा कहा आ टपका और फिर भी भौं करके मेरा सामना कर रहा है। अभी बतलाता हूँ इसे कि मैं कौन हूँ?

शेर ने जोर से दहाड मारी, पूरा जगल काप उठा, पर्वतो मे मानो प्रकम्पन सा पैदा हो गया। सारे प्राणी भय

से काप उठे । बिचारे कुत्ते की तो घिग्घी वध गई । उसने देखा रे यह् तो महाशक्ति सपन्न है । इससे सामना करना मौत को आमत्रण देना है । कुत्ता तो प्राण बचाने, दुम दबाकर भाग गया ।

शेर और कुत्ते मे बाह्य रूप से भले कुछ साद्दश्य दिखता हो पर इनकी वृत्ति मे वहुत वडा अन्तर होता है। शेर की वृत्ति आक्रमणकारी को पकड़ती है पर कुत्ते की वृत्ति आक्रमणकारी को नही, अपितु उसके शस्त्र को ही पकडती है ।

अपने आपका इतना प्रदर्शन मत करो कि उतनी शक्ति ही अपने मे न हो ।



वहना सरल है, रूकना है कठिन,
कहना सरल है, करना है कठिन ।
आज की दुनिया को देखते हुए,
मरना सरल है, जीना है कठिन ॥

(४४)

पतंग और बालक

किशोर ने पतग के करिणये वाधकर, उसके साथ डोरा लगाकर उसे बड़े परिश्रम से आकाश मे उडाया। किशोर की मेहनत से पतग आकाश की ऊचाइयो को छूने लगा। वडे वडे भवन और बुद्धिमान् इन्सान सभी तो धरती पर रह गए। पर पतग उन सवसे ऊपर उठकर निरभ्र आकाश का आनद लेने लगा लेकिन किशोर के हाथ मे पतग की डोर होने मे वह जव चाहता तव पतग को इधर-उधर मोड देता था। ऊपर नीचे कर देता था।

पतग को यह परतन्त्रता कतई पसद नही आई। वह सोचने लगा कहा तो मै इतना ऊपर पहुँच गया हूँ और कहा धरती का इन्सान मुझे अपने हाथो नचाता है। नही, मैं कभी भी इसके हाथो मे नाचना पसद नही करता, मै तो अपनी इच्छानुसार आकाश मे उन्मुक्त विचरण करूगा।

पतग ने अपने आपको किशोर के वधन से मुक्त वनाने के लिए हवा की लहरो के साथ एक झटका दिया और डोर के वधन मे मुक्त हो गया। अव वह अपनी इच्छानुसार उडने लगा। पर आश्चर्य कि अव आकाश की वुलन्दियो

को न छूकर निरन्तर नीचे की ओर आने लगा । पतग ने बहुत प्रयास किया ऊपर उठने का । पर उसका सब प्रयास निरर्थक सिद्ध हुआ । आखिर वह समय भी आ गया । जब वह एक खड्डे मे गिरकर अपने अस्तित्व को खो बैठा । उसका सारा अभिमान मिट्टी मे मिल गया ।

इन्सान भी जब उन्नति की ओर बढने लगता है तब यदि वह सही अनुशासन की डोर को बन्धन समझकर तोड देता है तो वह निश्चित रूप से जीवन की जिन ऊचाइयो पर है, वहा से गिरकर फुटपाथ पर आ जाता है ।



तत्त्ववेताओ को आज कोई कमी नही है,
राजनेताओ की आज कोई कमी नही है ।
आचरणहीन जीवन जीने वाले,
क्रान्तचेताओ की आज कोई कमी नही है ॥

आज का युवा विनाश के कगार पर खडा है,
आज का युवा विकारो के महाद्वार पर खडा है ।
सभल नही सका तो पतन है निश्चित,
आज का युवा विचारो के कच्चे तार पर खडा है ॥

(४५)

मेंढक की बात-चीत

एक वार फूदकता-फूदकता ममुद्रीय मेढक कुए मे आ पहुचा । कुए मे पहले से ही एक मेढक अपना अधिकार जमाए हुए बैठा था । जव उसनें नये मेढक को कुएं मे आते देखा तो उसके पास गया और पूछा—तुम कहा से आ रहे हो ? समुद्रीय मेढक ने कहा मैं समुद्र से आ रहा हू । कुए के मेढक ने न तो कभी अपनी जिन्दगी मे समुद्र को देखा था और न ही उसका नाम सुना था । पहली ही वार सुना था । वह तो यही समझ रहा था कि अगर दुनिया मे सबसे वडा जलाशय है तो मेरा यह कुआ ही है । इससे वडा कोई जलाशय नही है । इसी विचार के कारण कुए के मेढक ने एक छोटी-सी छलाग लगाई और समुद्रीय मेढक से वोला-- क्या इतना वडा है तुम्हारा समुद्र ?

तव समुद्रीय मेढक ने कहा—नही, समुद्र तो इससे वहुत वडा है ।

कुएं के मेढक ने थोडी और वडी छलाग लगाते हुए कहा—क्या इतना वडा है तेरा समुद्र ! तव भी समुद्रीय मेढक ने कहा—नही, मेरा समुद्र तो वहुत वडा है ।

कुए के मेढक ने फिर तो पूर्व के किनारे से पश्चिम

के किनारे तक एक बहुत बडी छलाग लगाई और फिर पूछा—बोल बता, क्या इतना वडा है तुम्हारा समुद्र ?

तब हसते हुए समुद्रीय मेढक ने कहा—अरे भाई ! समुद्र तो बहुत बडा है । उसे बतलाने के लिये तुम कितनी भी बड़ी छलाग लगा दो पर तुम उसकी सीमा- रेखा नही पा सकते ।

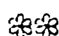
कुए का मेढक बोला—नही, मैं नही मानता कि समुद्र इतना बडा है । दुनिया मे सबसे बडा तो मेरा कुंआ ही है । यदि तुम्हे मेरे कुए से भी बडा समुद्र लगता है, तो जरा कूदकर बतलाओ कि कितनाबडा समुद्र है ?

अब क्या बतलाए उस कुएं के मेढक को ! क्योकि समुद्र तो इतना बडा है कि मेढक तो क्या, बडे से बड़ा इन्सान भी नही नाप सकता कि समुद्र कितना बडा है । समुद्रीय मेढक ने कहा - भाई ! मैं अपनी इन छोटी-छोटी छलागो से कभी नही बता सकता कि समुद्र कितना बडा है ? बस इतना ही कह सकता हू कि समुद्र बहुत बडा है ।

समुद्रीय मेढक समझाते-समझाते थक गया पर कुए के मेंढक के दिमाग मे यह बात नही जमा सका कि समुद्र कितना विशाल है ? क्योकि समुद्र की विशालता, कुए का अल्प बुद्धि वाला मेढक सोच भी नही सकता ।

इसी प्रकार अल्प-प्रज्ञा, अल्प-मति वाले को विशाल ज्ञान नही दिया जा सकता ।





(४६)

घट और पानी

घडे के मुह से पेट मे पहुचते पानी को देखकर घट अभिमान मे आकर बोला—मेरे मुह से पेट मे घुसकर तू ठण्डा हो जाता है। यह सब मेरी वजह से है। यदि तुझे भीतर प्रवेश न दू तो तू कभी ठण्डा नही हो सकता।

पानी ने कहा—घटराज! बात तो तुम्हारी सच है कि तुम्हारे मे प्रवेश करने से मेरे मे शीतलता अधिक बढ जाती है। पर यह भी सत्य है कि मेरा स्वय का स्वभाव भी शीतल होना है। उस शीतलता मे आप सहायक बन जाते हो। यदि मेरा स्वभाव शीतल होना न हो तो मुझे ठण्डा नही कर सकते। क्योकि आग का स्वभाव शीतल होना नही है। उसे कितना भी प्रयास करने पर शीतल नही किया जा सकता।

घट को पानी की बात नही सुहाई, क्योकि वह तो यह मान रहा है कि मेरे कारण ही पानी ठण्डा होता है। पानी को ठण्डा मै करता हू। पर यह मेरा अहसान न मान कर दूसरी बात करता है। घट थोड़ा रोश मे आगया और

बोला पानी को—चल हट, इतना करने पर भी तू मेरा अहसान नही मानता है, मै तुम्हे अपने भीतर स्थान नही देता। थोडा-सा झटका हुआ कि मटके के नीचे एक सुराख हो गया, बस सारे घट ने उस सुराख के माध्यम से पानी को बाहर निकाल दिया। सोचा अब मालूम पडेगी कि ठण्डा कौन करता है उसे ?

पर यह क्या ज्यो ही पानी घडे से बाहर निकला। इन्सान ने तुरन्त मटके को उठाया और एक तरफ फैंक दिया। क्योकि अब वह भी कोई काम का नही रहा। अनेक टुकडो मे विभक्त हो, फर्श पर पडा घट और फर्श पर आया पानी दोनो ही एक दूसरे का मुह ताकने लगे।

अपनी--२ ही बात को खीचने के कारण दोनो का गौरव मिट्टी मे मिल गया।

एक दूसरे को लेकर चलने वाला व्यक्ति ही जीवन की ऊचाइयो को छू सकता।

꙳



युवाशक्ति एक दुधारी तलवार है,
जिधर चाहो उधर होता वार है।
लक्ष्य न होगा तब तक उससे,
घातक परिणामो का ही विस्तार है॥

(४७)

कछुए की वह रात

सरोवर का सपूर्ण भाग पूर्ण रूप से शैवालाच्छादित था, जिधर भी दृष्पिात किया जाय, सभी ओर शैवाल ही शैवाल परिलक्षित होती थी।

एक रात किसी बालक न मनोरजन हेतु पत्थर का टुकडा सरोवर मे फेंक दिया। छपाक की आवाज आई और पत्थर शैवाल की हरीतिमा को छेदता हुआ भीतर प्रवेश कर गया। ठीक इसी समय एक कछुआ उस छिद्र के सन्निकट ही शैवाल के नीचे इधर-उधर दौड लगा रहा था। पत्थर के कारण जब शैवाल मे छिद्र हुआ तो कछुए ने उस छिद्र से अपना मुह बाहर निकाल कर देखा-उसे अत्यन्त ही सुखद आश्चर्य हुआ—अहो! पूरा नभ - मण्डल चन्द्रमा और तारात्रो से जगमगा रहा जिनसे सुखद-शीतल प्रकाश टपक रहा था-कितना शात प्रशात वातावरण। कछुआ बहुत देर तक देखता ही रहा। उसके मन मे विचार आया कि आज तक मैं तो यही समझ रहा था कि ससार केवल इस सरोवर तक ही सीमित है। पर आज मुझे ज्ञात हो रहा हे कि नहीं, जो हम समझ रहे है उससे दुनिया

बहुत बडी है । क्योन, जो मै देख रहा हू, वह अपने पारिवारिक जनो को भी बतलाऊ । यह सोचकर कछुए ने अपनी गर्दन अन्दर की ओर पारिवारिक लोगो के पास पहुचा। कहने लगा—चलो मे आपको बहुत ढाडी दुनिया बतलाता हू । जिसको आज तक हमने नही देखा देखकर आपको बडा मजा आएगा । पारिवारिक जन भी देखने के लिये उसके साथ चल पडे । पर इधर छोटा सा छिद्र हवा के झौको के कारण पुन बद हो गया । अब वह कछुआ पूरे सरोवर मे इधर से उधर घूमता है, पर उसे कही भी वह विशाल दुनिया देखने को नही मिली । बहुत घूमा, पर अब उसे वह दुनिया देखने को नही मिली । पारिवारिक लोगो ने भी समझा यह कही पागल हो गया लगता है । हम वृथा ही इसके पीछे चले आए ।

जिन्दगी मे ऐसे महत्त्वपूर्ण क्षण बहुत विरल हो आते है । उन महत्वपूर्ण क्षणो को जो व्यक्ति परिवार, धन आदि की आसक्ति मे खो देता है ! वह व्यक्ति कभी भी अगम लोक की विशिष्ट दुनिया को प्राप्त नही कर सकता ।

ॐ



धुआ आकाश को काला बना देता है,
रगो का सयोग विचित्र चित्रशाला बना देता है ।
कुसग के परिणामो को समझो इस युग मे,
दुर्जन सज्जन को अपने रग मे मिला देता है ॥

(४८)

इन्सान और फूल

मार्निंग वाक (Morning Walk) करने के लिए इन्सान प्रातःकाल उठा और बगीचे मे घूमने के लिये निकल पडा। इधर–उधर घूम–घाम कर प्रकृति के सुरम्य सुवासित वातावरण का आनन्द लेने लगा, इसी बीच महकते मुस्कराते एक गुलाबी फूल के अति सन्निकट, पहुचकर इन्सान ने देखा फूल के अन्दर सुवास तो बहुत अभिराम है पर छोटे-छोटे कृमि भी दौड रहे है।उसे देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि इतने सुन्दर अभिराम फूल मे भी कीडे है।

जिस फूल को पाने के लिये इन्सान उसके पास पहुचा था। उस पर कीडो को देख कर वह मुह मोडकर चल पडा। इन्सान को इस प्रकार जाते देख कर फूल मुस्कराया और बोला–ए सृष्टि के श्रेष्ठतम प्राणी इन्सान! दुनिया मे तुम सर्वाधिक श्रप्ठ माने जाते हो। मेरे मे सुगध होते हुए भी कीडे देख कर तुम मुह मोड रहे हो। पर जरा दूसरो को देखने की बजाय अपन को ही देखो तुम्हारे भीतर कितने कीडे कुलबुला रहे है। बाहर से तुम अपना पॉश सुन्दर बना लो, पर अन्दर मे स्वार्थ का कीडा कुलबुला रहा है,

क्रोध का सर्प फुफकार रहा है। मोह का मगर मुह फैलाए हुए है। क्रोध की चिगारिया भड़क उठी है। तुम्हारे भीतर कितने बड़े-२ भयानक विषैले जन्तु घूम रहे हे। उनमे से एक दुर्गुण रूप जन्तु भी जीवन को तबाह कर सकता है।

जहा गुण होते हैं वहा अधिकाशत कोई न कोई दुर्गुण भी मिलता है। सभी प्रकार से पूर्ण तो कोई विरल ही व्यक्तित्व होता है। इसलिये तुम जरा अपना देखो। तुमने अपनी दृष्टि को दुर्गुणदर्शी बनाली है। प्रत्येक के दुर्गुण ही देखते हो इसलिये दुखी हो। पर दृष्टि को सद्-गुणदर्शी बनाओ तो सदा हमारे जैसे मुस्कराते रहोगे। पुष्प की अन्त पुकार को इन्सान सुनता ही रह गया।



विना घर्षण के आग नही निकलती,
विना कण्ठो के राग नही बनती।
यही कारण है कि बहुत चाहने पर भी,
विना सुसाधना के माग नही फलती।

(४९)

"बीज का वृक्ष"

बीज अपनी सारी स्वतन्त्रता को छोडकर वृक्ष का विशाल रूप धारण करने के लिये भूमि मे बैठ गया। भूमि की भयकर उष्मा मे भी वह नही घबराया। प्रस्फुटन हुआ और वही बीज अ कुरण के रूप मै दुनिया के बीच मे चला आया। अब तो मेघ ने पानी बरसा कर उसका सीचन करना प्रारम्भ कर दिया। हवा ने अनुकूल रूप मे बहकर उसके प्राणो मे ताजगी भर दी। पूरी प्रकृति ने अब उसका सभी तरह मे सहयोग करना प्रारम्भ कर दिया।

बीज उसी उत्साह के साथ आगे बढता चला गया। और एक दिन वह आया कि उसके मन की मुराद पूरी हो गई। वह विशाल वृक्ष रूप मे उभर कर आकाशी-ऊचाइयो को छूने लगा। वृक्ष की इस विशालता को देखकर फुट-पाथिया इन्सान बोला–छोटा सा बीज पडे पडे ही हवा पानी को पाकर बढ गया है। और अब तो विशाल वृक्ष बन गया है।

आदमी की बात को सुन वृक्ष ने हवा मे लहराते हुए मूक अभिव्यक्ति दी। भोले इन्सान! क्या कह रहा है तू।

आगे बढाया है ? तेरी यह कल्पना कि ऐसे पडे पडे ही वृक्ष बन गया—कोरी कल्पना ही है। ऐसी कल्पना के कारण ही तुम्हारा विकास नही हो पाया है। विकसित होने के लिए पुरुषार्थ करना होगा। स्वच्छंदता से हटकर सही लक्ष्य की ओर गति करनी होगी। तभी ऐसा विशाल रूप धारण किया जा सकेगा।

वृक्ष की इस अभिव्यक्ति ने आदमी की चेतना को जागृत कर दिया। और वह बढ चला पुरुषार्थ की दिशा मे।



विना दया के कोई इन्सान नही होता,
विना तनु के कोई परिधान नही होता।
आदर्शवादिता का नारा लगाने वालो,
विना परमार्थ किये कोई महान् नही होता॥

सुगंध के विना फूल किसी काम का नही होता,
प्रकाश के विना दीपक किसी काम का नही होता।
कैसा भी युग आ जाय भाइयो !
साधना के विना साधक किसी काम का नही होता॥

(५०)

"कीचड़ और कंजूस"

वर्षा के कारण कीचड ने गली-गली मे अपना स्थान लिया। लोगो का आवागमन अवरुद्ध हो गया। कीचड मे पैर न भर जाय, इस भय से लोग एक किनारे सटकर चलते। कीचड ने देखा—वाह! मै भी कितना महान् हूँ कि कोई भी व्यक्ति मेरे ऊपर से नही निकल सकता। मेरा यह रूप मेरे लिये वरदान सिद्ध हो गया।

इधर कजूस भी बोला—वाह मै भी कैसा हूँ कि मैने ऐसी वृत्ति बना रखी है, अपनी, कि कोई भी व्यक्ति मेरी सपत्ति नही हडप सकता है। यदि मेरी कजूस वृत्ति न होती तो मेरी सपत्ति भी कभी की समाप्त हो जाती।

कीचड और कजूस दोनो अपनी-अपनी वृत्ति पर खुश होने लगे। क्योकि कीचड ने गन्दगी फैलाकर सब जगह मच्छर ही मच्छर फैला दिये। जिनके कारण से इन्सान परेशान हो गया।

कजूस ने भी इधर-उधर से न्याय-अन्याय करके पैसा इकट्ठा कर लिया और तिजोरी मे भर लिया। और इधर आदमी हैरान हो गया—गरीबी के कारण। भूखो मरने लगा।

इन्सान को दुख देने वाले इन लोगो की आदत प्रकृति को सहन नही हुई। सूर्य ने दूसरे दिन से ही तेजी से तपना प्रारम्भ कर दिया। सूर्य की भयकर उष्मा को कीचड सहन नही कर सका और कुछ ही समय मे सूखकर अपनी जिन्दगी को खो बैठा।

कजूस के पेट मे दर्द पैदा हो गया। सोचा यो ही मिट जायगा। पर जब नही मिटा तो इधर-उधर से सामान्य उपचार करना प्रारम्भ किया। पैसा खर्च करने की उसकी आदत नही थी। सही उपचार के विना दर्द वढता चला गया और एक दिन ऐसा झटका लगा कि कजूस अपना विशाल मकान लाखो की सपत्ति परिवार सब कुछ छोडकर यहा से चल वसा।

दुर्गुणी की इहलोक-परलोक दोनो जिन्दगिया विगडती है।



वोलना सरल है, सुनना है मुश्किल,
तोडना सरल है जोडना है मुश्किल।
चौरासी लाख योनियो मे आत्मा को,
घुमाना सरल है, खोजना है मुश्किल ॥

(५१)

वंश-दल का घर्षण

जगल मे वहुत तेज तूफान चलने लगा। वडे वडे वृक्ष जड मूल से उखड कर गिरने लगे। कुछ पौवे नीचे झुक गये और उन्होने तूफान को अपने से ऊपर होकर जाने का स्वतन्त्र अधिकार दे दिया। इधर पहाड पर खडे वास के झाड भी तेजी से भिडभिडाये। रक्षा करने के लिए अपनी वे एक दूसरे मे सामने का प्रयत्न करने लगे। पर कोई वॉस एक दूसरे की रक्षा करने के लिए समर्थ नही हुआ। ज्योही वास के पास कोई वास आया तो वह उसे धक्के मार कर हटाने लगा। परिणाम स्वरूप एक भाई एक भाई को आश्रय न देकर परस्पर सघर्ष करने लगे। सघर्ष मे वे अपने आपको भूल गये। और इतनी तेजी से भिड गये कि परस्पर की घर्षण से आग पैदा हो गई। उस आग ने एक दूसरे को जलाना प्रारम्भ कर दिया। अव क्या था, आग को भोजन मिल गया, और वह वढती ही चली गई। देखते ही देखते सारे वश दल को जलाकर उसने राख कर दिया। अपने इस परिवर्तन को देखकर सव वॉस आसू वहाने लगे। पर दो के सघर्ष मे तीसरा लाभ उठाता ही है।

समझदार इन्सान भी इसी तरह झगड पड़ते है। भाई-भाई मे ना कुछ बात के पीछे इतना बड़ा सघर्ष हो जाता है कि कोर्ट कचहरी पहुँच जाते है। और इस सघर्ष मे दोनो की सम्पत्ति स्वाह-समाप्त होने लगती है। और जब परिणाम आता है तब आखे खुलती है। इस तरह का सजर्ष दोनो को नीचे गिरा देता है।

भाई को भाई आश्रय देना सीखे, पर वास की तरह सघर्ष कर हानि उठाकर अपने विनाश को आमन्त्रण न देवें।



सवर्तक तूफान जैसा कोई तूफान नही होता,
स्वयभू समुद्र जैसा कोई समुद्र नही होता।
दीनो के झरते आसुओ को पोछना सीखो,
परोपकार जैसा कोई उपकार नही होता॥



आज धन ही धन की दोड लगी है,
आज एक दूसरे की होड लगी है।
आज का मानव नही समझ रहा है कि,
आज विनाश की ओर ही घुडदौड लगी है॥

पतंगिये की भिन्नभिन्नाहट

हजार पावर के बल्व की चमचमाती रोशनी आकर्षित हो पतगिया उसे पाने के लिए उस पर झपापात करने लगा। ज्यो ही उसने बल्व पर झपकिया त्योही बल्व की उष्मा ने उसे सतप्त कर भूमि पर पटक दिया। दूर से आकर्षक लगने वाले बल्व की सन्निकटता घातक सिद्ध हुई। कुछ समय के अनन्तर जब पतगिये को होश आया। होश आने के साथ ही उसकी दृष्टि पुन उसी बल्व पर गिरी, जिससे की उसकी यह दुर्दशा हुई थी। अपनी दुर्दशा को भूलकर फिर से उसे पाने के लिए नादान पतगिये ने झपापात किया। इस बार फिर वही हुआ जो होना था। बल्व की उष्मा ने फिर सतप्त किया और उठाकर भूमि पर पटक दिया। कुछ देर बाद फिर पतगिये को होश आया तो उसने फिर उसी बल्व का प्रकाश पाने के लिए सब कुछ भूल-भालकर उडान भरी और एक बार फिर से उस पर जा पहुँचा। इस बार भी वही हाल हुआ, जो होना था। पत्तगिया भूमि पर आ पडा और अब फिर उस बल्ब पर जाने के लिए छटपटाने लगा। किन्तु बार-बार के झप से सतप्त हो जाने के कारण उसकी शक्ति खत्म हो गई। अब उसमे झप करने की ताकत नही रही। अब वह छटपटाता हुआ जिन्दगी के अन्तिम क्षण गिन रहा था।

पतगिये की इस मूढता को देखकर उसी प्रकाश से लाभ उठाने वाले समझदार इन्सान से रहा नही गया। इन्सान

ने उस छटपटाते पतगिये को इगित करके कहा—अहो ! यह कैसा ना समझ प्राणी है कि जिसने बल्ब पर झपापात करने मे बार-बार चोट खाई है । दुखी हुआ है उसी बल्ब को पाने के लिए झप करते-करते अब स्वय ही अपने प्राण दे रहा है ।

इन्सान की बात सुनकर अन्तिम श्वास गिनना पतगिया एक बार भिनभिनाया और जाते-जाते आदमी को शाश्वत सत्य सदेश सुना गया—हे सृष्टि के श्रेष्ठ समझे जाने वाले इन्सान ! निश्चित ही तुम मुझसे बहुत होशियार और बुद्धिमान हो । इसमे कोई सन्देह नही । मुझे तो यह ज्ञान नही था कि इस बल्ब से मुझे सन्तप्त होना पडेगा । मै तो यही समझ कर कि इसमे मुझे सुख प्राप्त होगा । इसीलिए बार-बार झप करता रहा । पर तुम क्या कर रहे हो ? विषयो को पाने के लिए तुम्हारी दौड निरन्तर लग रही है । दिन रात एक कर रहे हो यह जानते हुये कि इन विषयो को यही छोडकर जाना होगा और इससे शाश्वत शान्ति भी प्राप्त नही हो सकेगी ।

फिर भी तुम इसकी आसक्ति मे पडकर अपने अमूल्य जीवन को बर्बाद कर रहे हो । ठीक है मै तो अज्ञानी हूँ ो, इसलिए बल्ब पर झप करके अपने प्राण दे रहा हूँ योंकि मुझे नही मालूम था कि बल्ब मेरे लिए हानिकारक द्ध होगा पर तुम्हे तो विषय की हेयता मालूम है । इसके र भी तुम यदि इसी मे आसक्त रहकर अपनी जिन्दगी दि करते हो तो बोला—कौन बडा अज्ञानी है ।

पतगिये की इस भिनभिनाहट का यह सदेश इन्सान तक नही समझ पाया ।

[प्रकृति भी मुखर हो उठी

(५३)

मकड़ी का जाल

आदमी जब अपनी सुरक्षा के लिए जगलो मे रहना छोड़कर घर बनाने लगा। तो सृष्टि का एक विचित्र प्राणी मकड़ी ने भी अपना घर बनाने का विचार किया। वह सोचने लगा जब आदमी रक्षा के लिए इतना बड़ा घर बना सकता है तो फिर मै भी क्यो न अपने लिए घर बना सकती हूँ ? मै भी ऐसा मजबूत और अभेद्य प्रकार वाला घर बनाऊंगा कि कोई भी उसमे प्रवेश न कर सके। आदमी भी देखता रह जाय। उसे भी ज्ञात हो कि बुद्धिमान वही नही है दुनिया मे और भी प्राणी बुद्धि ने उसकी समकक्षता बल्कि विशिष्टता रखते है।

इधर तो इन्सान ने चूना-ईट-पत्थर आदि एकत्रित करके मकान बनाना प्रारम्भ किया और कुछ ही महीनो मे मकान बनकर तैयार हो गया। आदमी ने देखा मकान तो अच्छा बन चुका है पर इसमे प्रवेश करने के लिए शुभ मुहूर्त देखना होगा। वह पहुँचा सीधा ज्योतिषी के पास, मुहूर्त पूछने। मुहूर्त एक महीने बाद का निकला। आदमी ने मकान को यह सोचकर बन्द कर दिया। कि एक महीने

उसने प्राण छोड दिये । जिसे सुरक्षा के लिए बनाया था वही उसके लिए घातक सिद्ध हुआ ।

आदमी ने जब महिने भर बाद पुनः उस मकान मे प्रवेश किया तो जाले म मकडी को मरा पाया । उसने उसी समय झाडू उठाया और एक ही झपट मे जाल सहित मकडी को नीचे गिराया । लेकिन यह नही सोचा कि जिस प्रकार मकडी अपने ही जाल मे फस कर मर गई है । वैसे ही मैं भी इस मकान, परिवार, धन दौलत, वैभव मे आसक्त हो, शान्ति-शान्ति की चाहना करते हुये मरणान्त जीवन मे ही चल पडूँगा । यह मेरा निर्माण मेरे लिए भी घातक सिद्ध होगा । मेरा एक भव नही अपितु भव-भव विगाडने वाला बनेगा ।

इन्सान यह समझे या ना समझे पर दुनिया के रग मच पर यह सव घटित हो रहा है । आदमी स्वय की मौत के लिये स्वय ही साधन जुटा रहा है ।



मानव ही अपन भाग्य का निर्माता है,
मानव ही अपने आपका प्रणेता है ।
क्या नही है मानव के भीतर,
मानव ही अपने आपका विधाता है ।।

(५४)

सर्प का सन्देश

सपेरे की वीन पर सर्प नाचने लगा। सपेरा जिस तरह सर्प को नचाना चाह रहा था। सर्प ठीक उसके इंगितानुसार ही नृत्य कर रहा था सर्प की इस दुनिया को देख कर आदमी बोला—कहाँ तो यह सर्प देवता कहलाता था। इसकी एक फुंकार ही लोगो को डराने के लिए काफी थी। आदमी डरकर इसकी पूजा करते थे। और कहा बेचारा आज सपेरे के इशारे पर नाच रहा है। पुंगी की सुरीली आवाज के वश मे होकर इसने अपनी यह दुर्दशा बना ली है।

आदमी की बात को सुनकर नाचते सर्प ने निश्वास छोड़ते हुए कहा—हे समझदार इन्सान! तुम्हारा कहना सर्वथा सत्य है। मैंने इस सपेरे की पुंगी के वश होकर अपनी यह दुर्दशा की है। यदि मै इसके वश नही होता तो यह मेरी जहर की ग्रन्थि नही निकाल पाता और न ही मुझे नचा पाता। आज मै अपने अज्ञान पर पश्चाताप कर रहा हूँ। पर जरा सोचो—तुम क्या कर रहे हो। तुम तो सृष्टि के सर्वाधिक बुद्धिमान प्राणी हो। तुम्हारी क्या दशा



सुख के लिए मानव आग मे खेल रहा है,
विप बुझे वाणो को भी दृढता से झेल रहा है।
इतने पर भी सुखी नही वन पाया वह, क्योकि,
जीवन रथ को सदा उत्पथ मे ही ठेल रहा है ।।

(५५)

मूर्खता किसकी ?

पक्षियो मे तोता एक ऐसा पक्षी है कि वह मानव जैसी भाषा बोल सकता है। पक्षी को मानव जैसी भाषा बोलते देख कर आदमी ने सोचा क्यो न इसे पाल-पोषकर बड़ा किया जाय और इसे मानव की भाषा सीखा दी जाय। बस फिर क्या था। आदमी ने तोते को मानव की भाषा सिखाना प्रारम्भ किया।

बोलो मीठू राम-राम सा ता तोता बोला राम-राम सा

बोलो मीठू दो एका दो दो--दो दूनी चार

तोता बोलता है—दो एका दो--दो दूनी चार।

आदमी ने सोचा वाह, अब तो बहुत होशियार हो गया है तोता। अब इसे पिंजरे मे रखने की क्या आवश्यकता है ? क्यों न इसे समझा देना चाहिए कि बिल्ली कुत्ता कोई भी आ जावे तो उड जाना ताकि उसे खा न सके। यह सोचकर आदमी ने तोते को रटाया। बोलो मीठू कुत्ता बिल्ली आवे तो उड जाना।

मीठू बोला—कुत्ता बिल्ली आवे तो उड जाना।
कुत्ता बिल्ली आवे तो उड जाना।